ओ३म्

नित्यकर्मविधिः

———०:०———

प्रातःकृत्य-स्नानविधि-और सन्ध्योपासन

जिसको

पं० गोविन्दराम (भट्टहुंडू)

२ संस्कृत टीचर स्टेट हाइ स्कूलने

प्रचलित हिन्दी भाषामें

'इतिकर्तव्यता' से संवलित किया ।

और

पं० विश्वनाथ एंड सन्स

फोटाग्राफर्स इत्यादिने अपने आधिपत्यस्थ

'कश्मीर प्रताप स्टीम प्रेस'

श्रीनगर कश्मीरमें छपाया है ॥

शाकाब्दाः १८४१ नं०२०२०

द्वितीयावृत्तिः १००० मूल्यम् ।=)

महाशयगण!

हमारे कारखानेमें हर किसी भाषामें लिखे पुस्तक वा पत्र अथवा प्रबन्ध आदि 'संस्कृत अंग्रेजी फारसी उर्दू' वगैरा ग्राहककी इच्छाके अनुसार मोटे मध्यम वा सूक्ष्म अक्षरोंमें छपाये जाते हैं छपाईका मूल्यभी कम लिया जाता है ॥ और रबरकी मुहरेंभी हर किसीकी रुचिके अनुसार तरह२के अक्षरोंमें बनाई जातीहैं। तथा सुन्दर सफा फोटू (तस्वीर) भी जिसका जैसा जी चाहें वैसे उठाये जाते हैं। मस्तूरातके भी तस्वीर बड़ी सावधानी व हुशयारीसे बनाये जाते हैं ॥

अगर किसी महापुरुषको कोई पुस्तक छपानी वा मुहर बनानी हो अथवा फोटू उठवाना हो तो वह हमारे पास आकर या चिट्ठीपत्रद्वारा हमारेसाथ प्रबन्धकरके अपना मनोरथ पूर्ण करें ॥

पं० विश्वनाथ एंड सन्स फोटाग्राफर्स व मालिकान्
कश्मीर प्रताप स्टीम प्रेस श्रीनगर (कश्मीर)

भूमिका

बहुत कारणों से भूमंडल के सब से प्रशंसनीय, पुण्य-क्षेत्र, विद्वद्रत्नाकर विद्यास्थान, और सभ्यदेश इस भारतवर्ष के निवासी चार वर्णों में से श्रेष्ट ब्राह्मण लोगों का ब्राह्मणपन उक्तगुणों समेत दिनादिन अब घटता जाता है । जिन ब्राह्मणों की स्तुति पूर्वकाल में प्रत्येक जगह पर कीजाती थी। और जिनका माहात्म्य सुनकर क्या सजातीय क्या विजातीय राजे महाराजे धनी और शूरबीर पुरुष भी उनका नाममन्त्र उच्चारते वक्त सिर झुकाते थे । जो अपने विद्याप्रभाव से प्रत्येक राज्य में मन्त्री मित्र और आचार्य ही ठहरा करते थे । जिनका वर और शाप पत्थर की लकीर होता था । जो अपने ज्ञानबल से इन्द्रादिक देवों को भी अपने वश्य में रखते थे । जिन्हों ने प्राचीन समय में निस्सीम ज्ञानशक्ति से ऐसी ताकतें, ऐसी कलायें, ऐसी वैदंगी, ऐसा भूगोलविज्ञान और खगोलविज्ञान, ऐसा साइन्स, और ऐसा परमार्थतत्त्व प्रकट कर रखा है, कि जिस के मुकाबिल में आजकल एक आध पुरुष भी इस पृथ्वी मण्डल में विद्यमान नहीं है । यदि कोई हो भी तो वह उन्हों के निर्मित पुस्तकों को मार्गदर्शक बनाकर अपने आप को पंडितंमन्य मानता है ॥

हम वह ब्राह्मण थे । जो पूर्वकाल में सांसारिक तमाम सुखों और भूगों को भोगते हुये अपना परलोक वेद उपदेश के अनुसार चलकर सुधारते थे और नीचले तीन वर्णों में भी

क्षत्रिय को प्रजा शासन के समय तथा युद्धके समय नीतिपूर्ण सदुपदेश जयदायकमन्त्र अथवा वैराग्य के समय ज्ञानपूर्ण आत्मोपदेश देदेतेथे, एवं और वर्णों को भी उनके धर्म कर्मों के अनुसार हितोपदेशों से दोनों लोकों के लिए सत्यसुख से और नित्यसम्पदाओं से परिपूर्ण करदेते थे।

अब आज हम में उन्ही महिमाओं के घट जाने के कारण—पितृपैतामहिक विद्याओं का न पढना और न जानना उन की जैसी इच्छाओं का न करना, और परलोक को विस्मृति में डालना—इत्यादि बहुत से हैं।

आजकल कुछ अंश के बिना जितने ब्राह्मण भाई हैं। वह सब के सब अन्य विद्याओं को हां—जो केवल शिल्पमात्र ही हैं, हितकारिणी मान कर अपने आचार, विचार, धर्म, कर्म, स्नान, सन्ध्या, वैश्वदेव, व्याहृति, वेदपाठ आदि नित्य नैमित्तिक क्रियाओं को छोड कर अत्यन्त हीनावस्था में पड रहे हैं। जिस अवस्था का नाम उन्हों ने आजादी रखा है। जिसका फल प्रत्यक्ष है कि उत्तम होकर अधम, बली होकर निर्बल, और स्वयं आचार्य होकर औरों के शिष्य बन रहे हैं॥

मुझे यह अत्यन्त शोक से कहना पडता है, कि इस किस्म की आजादी का विचार तो केवल हमारे ही भाइयों को सूझा है, क्योंकि और मजहबों के लोग पूर्ववत् बल्कि उससे भी बढकर अपने धर्मी असूलों के पाबन्द रहते हैं। और अपने सन्तानों में अन्य विद्याओं से पाहिले अपनी धर्मविद्या का संस्कार डालते हैं। और उन को मजहबी असूलों पर कारबन्द रहने की सख्त ताकीद करते हैं।

बरखिलाफ इस के हमारे भाई दिन बदिन अपने धर्म से गिरते जाते हैं। जिसका नतीजा यह होता है कि उनको न काफी वृत्ति मिलती है, न आदर सत्कार और न परलोक।

क्योंकि यह लोग अन्यभाषाओं में ही अपनी विद्याध्ययन की अवस्था समाप्त करते हैं। और अपनी सच्ची हितकारिणी पूर्वजों की संस्कृतविद्या से तो संस्कार हीन रहते हैं। जिस का फल—मैं बडे अफसूस से लिखता हूँ—यह होता है। कि स्वधर्म की अनभिज्ञता से कभी २ औरों के हथखण्डों में फँस कर वह अवर्णवर्ण भी हो जाते हैं

बल्कि जब कभी किसी सज्जन महात्मा विद्वान् पुरुष की प्रेरणा से अपनी प्राचीन सद्विद्या के, अपने प्राचीन आचार के, और अपने प्राचीन नित्य नैमित्तिक कर्म के तलाश में यह लोग पडते हैं। तो उस समय सुखदायिक संस्कृतविद्या का पढना उन्हें कठिन दिखाई देता है। जिस से यह लोग ऐसी प्रेरणा किये जाने पर भी अपने ब्राह्मणपन से वञ्चित ही रहते हैं॥ अपने भाइयों की गिरी हुई अवस्था देख कर मेरे मन में बहुत काल से यह संकल्प उठता रहा है, कि संस्कृत से नावाकिफ नवयुवक भाइयों को कुछ आचार विचार नित्यकर्म आदि का मार्ग ऐसी सरल रीति से मिले. जिस से वह घर बैठे ही आवश्यक कुछ आचार आदि को स्वयं सीख सकें, और औरों को भी सिखा सकें। इस संकल्प के पूर्ण करने का यही विचार आगया कि अत्यन्तावश्यक और मुख्यतम प्रथम पुस्तक "शौचकर्म स्नानविधि और सन्ध्योपासन आदि" ऐसी प्रचरितभाषा [हिन्दी] में लिखा जाये कि जिस से नित्यकर्म आदि आचार की प्राथमिक शिक्षा सुगम बन जाये। जिस से तमाम छोटे बडे केवल देवनागरी अक्षर सीखकर ही इस से फाइदा उठा सकें॥

विनीत विज्ञापक
पंडित गोविन्दराम २संस्कृत टीचर
स्टेट हाइ स्कूल श्रीनगर कश्मीर

सन्ध्या अवश्यकर्तव्य कर्म है

प्रभुसम्मित उपदेश देने वाले वेद आदि शास्त्र हमें मंगल-दायक शासन करते हैं :—**अहरहः सन्ध्यामुपासीत ।** षड्विंशब्रा०प्रपा १५ खं० ५॥ द्विज प्रतिदिन सन्ध्या की उपासना किया करें ॥ **तस्माद्ब्राह्मणोऽहोरात्रस्य योगे सन्ध्यामुपासीत ।** जिस कारण दिन और रात्रि के पापों का नाश सन्ध्या से होता है, और सन्ध्या ही ब्रह्म प्राप्ति कर देती है । इस लिये दिन और रात्रि के मिलने के समय इस की उपासना करनी चाहिये ॥ **उद्यन्तमस्तं यान्तमादित्यमभिध्यायन्कुर्वन्ब्राह्मणो विद्वान् सकलं भद्रमाशु ।** तैत्तिरेय आ० २ प्रपा० २ अनु० २ ॥ सूर्य के उदय और अस्त के समय विद्वान् ब्राह्मण आदित्य का ध्यान करने वाला तमाम मंगलों को पाता है ॥ **यदह्नात्कुरुते पापं तदह्नात्प्रतिमुच्यते । यद्रात्रियात्कुरुते पापं तद्रात्रियात्प्रतिमुच्यते ॥** तैत्तिरेयारण्यक ॥मनुष्य जिस पाप को दिन में करता है वह पाप दिन की (सायं की) सन्ध्या से नष्ट जाता है । और जिस पाप को रात्रि में करता है वह पाप रात्रिसन्ध्या (प्रभातसन्ध्या) से नष्ट जाता है ॥

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेन्नैशमेनो व्यपोहति । पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम् ॥ मनुः २ । १०२ ॥ प्रातः काल की सन्ध्या में खडा रह कर जप करने वाला रात्रि के पापों से छुट जाता है । और सायंकाल की सन्ध्या में बैठ कर जप करने वाला दिन के पापों से छुट जाता है ॥

इत्यादिक सब वेद पुराण धर्मशास्त्र गृह्य और कल्पों में द्विजों का अवश्यकर्तव्य नित्यकर्म प्रभात और सायं की सन्ध्या उपदेश किई गई है । और मध्याह्न की सन्ध्या भी गृह्य-परिशिष्ट-शौनक-जयन्त-पारिजात आदिकों ने उपदिष्ट जान लेनी चाहिये ॥

इस त्रिकाल सन्ध्या के करने से द्विजवृन्द सब पापों से छुट जाता है और अनामय ब्रह्मलोक को पाता है । जैसा कि कहा है:-

सन्ध्यामुपासते ये तु सततं शंसितव्रताः । विधूतपापास्ते यान्ति ब्रह्मलोकं सनातनम् ॥ सन्ध्या का व्रत धारण किये हुये जो द्विज इस की उपासना नित्य किया करते हैं । वह पापों से मुक्त होकर सनातन ब्रह्मलोक को पाते हैं ॥

तथा इस के न करने से ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य दोषी हो-जाते हैं । जैसा कि कहा है:—**नानुतिष्ठति यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम् । स शूद्रवद्बहि-**

ष्कार्यः सर्वस्माद्द्विजकर्मणः ॥ मनु २ । १०३ ॥ जो द्विज दोनों वक्त की सन्ध्या नहीं करते हैं वह शूद्र की तरह द्विज कर्म से बाहिर करने के योग्य हैं ॥ अनर्हः कर्मणां विप्रः सन्ध्याहीनो यतः स्मृतः ॥ छान्दोग्य-परिशिष्ट ॥ जिस कारण सन्ध्याहीन विप्र कर्मों के योग्य नहीं रहता है । इस लिये सन्ध्या को कभी न त्यागें ।

सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु । यदन्यत्कुरुते कर्म न तस्य फलभाग्भवेत् ॥ श्रीदक्षः ॥ सन्ध्या के बिन पुरुष नित्य अशुद्ध होता है । वह किसी कर्म के लाइक नहीं है । वह और जिस किसी कर्म को करता है ; उसका फलही नहीं पाता है । अर्थात् उस के सब कर्म निष्फलही हो जाते हैं ॥

सन्ध्या के समय इस की उपासना के बिना और कोई काम निषिद्ध है ॥ अथ य इमां सन्ध्यां नोपास्ते नाचष्टे न स जयति । ये तूपासते श्रोत्रिया भवन्तीत्युपनीताः । छेदन भेदन भोजन मैथुन स्वपन स्वाध्यायानाचरन्ति ये सन्ध्याकाले । ते श्व सूकर सृगाल गर्दभ सर्पयोनिष्वभिसंपद्यमानास्तमोभिः सम्पद्यंते

तस्मात्सायं प्रातः सन्ध्यामुपासीत ॥

गोभिलगृह्य ॥ फिर जो इस सन्ध्या की उपासना नहीं करता है। वा औरों को इस का उपदेश नहीं देता है। वह जय नहीं पाता है ॥ जो पुरुष तो इसकी उपसना करते हैं, वह गायत्री संस्कार-वान् होकर वेदाध्ययन के फलको पाते हैं ॥

जो लोग सन्ध्या काल में काटना, फाडना, खाना, स्त्रीसंग, निद्रा, और वेदपाठ वगैरा काम करते हैं, वह कुत्ते, सुअर, गीदड, गधे, और साम्प आदिके जन्म में आकर अज्ञान रूपी अन्धेरे से ढाम्पेजाते हैं, इसलिये सुबह और शाम को सन्ध्या की उपासना करनी चाहिये ॥

सन्ध्या का उत्तम काल

प्रातःको 'तारामण्डल अभी सम्पूर्ण चमक रहा हो' इस समय से सूर्य के उदय होने तक गायत्रीका जप खडे होकर करते रहें, और सायं को 'सूर्य के बिम्ब निस्प अभी अस्त को न हो गया हो' इस वक्त से तारामण्डल जब सम्पूर्ण चमक निकले तबतक बैठकर इसका जप करते रहें, तथा मध्याह्नकी सन्ध्या 'सूर्य आकाश के मध्य में ठहरा हो' इस समय करनी चाहिये। इससे उलटा मध्यम और अधम समय है।

रोगादिआपत्ति में और मरते और बालक आदि उत्पन्न होने के अशौच के दस दिनों मेंभी सन्ध्या को न छोड देना, केवल देव ऋषि पितृ तर्पण ही अशौच में न करना चाहिए ॥

संक्षेप से प्रातःकृत्य और शौच की विधि

ब्राह्ममुहूर्त (अरुण उदय से पहिले प्राय: ५ घडी रात) को नीन्द से उठें। हाथ पैर मुख धोकर ३ आचमन करके उपस्पर्शन (स्नानविधि में जैसा लिखा है) तथा प्राणायाम करके शुद्ध भूमि पर चैल के ऊपर मृगछाल, उस के ऊपर कुशा बिछाकर इसी आसन पर (जैसा गायत्री जप में आसन लिखा है) आसन धर कर पूर्व की तरफ मुख करके ठहरें फिर ललाट पर तेजोमय अपने गुरु का ध्यान धर कर 'गुरुस्तुति' आदि जो यहां अलग लिखी गई हैं, पढें। फिर गुरु से आज्ञा लेकर उन के उपदेश के अनुसार यथेष्टसमय अपने इष्टदेवता की ध्यानधारणा में रहें फिर उस से निकलकर शौच स्नान सन्ध्यावन्दन पूजा अग्निहोत्र पाठ तथा सदाचार आदि धर्म का पालन अपने २ वर्णाश्रमके अनुसार आरम्भ कियाकरें ॥

विप्रो वृक्षः मूलतस्तस्य शौचं
वेदाः शाखा धर्मकर्माणि पत्रम् ।
तस्माच्छौचं यत्नतः पालनीयं
छिन्ने मूले नैव वृक्षो न शाखाः ॥

(अर्थ) ब्राह्मण एक दरख्त है। उस की झड शौच (शुद्धि) है, वेद उस की शाखें, और धर्म और कर्म उस के पत्ते हैं। इस कारण उस दरख्त ब्राह्मण के झडों (शौच) की हिफाजत अत्यन्त

जड़ों से होनी आवश्यक है। क्योंकि झडों के सूख जाने पर न दरख्त रहता है और न उसकी शाखायें बढ सकती वा निकल सकती हैं॥

शौच दो प्रकार का है। (आभ्यन्तर और बाह्य) (भीतर की शुद्धि और बाहिर की शुद्धि)॥

मित्रता, दया, हर्ष (खुशी) और उपेक्षा (बे-परवाही) आदि गुणों की भावना (आरास्तगी) रखने से मद-मान-ईर्षा (बदजुनी) असूया (कीना) आदि चित्तके मलों का धोना अन्दर की शुद्धि है। अर्थात् मनुष्य अपने से सुखी पुरुषों को देखकर चित्त में प्रसन्नता रखे, न कि ईर्षा। दुःखी को देखकर वह भावना हो, जिस से इसका दुःख दूर हो सके। यह दया की भावना घृणा (नफरत) से और किसी की हानि से बचालेती है॥

इसी प्रकार पुण्यवान् को देखकर हर्ष की भावना रखने से असूया दूर हो जाती है। पापी को देख कर उदासीनता की भावना रखे। अर्थात् न उसके साथ प्रीति करे न वैर। इस भावना से अमर्ष (न सहारना) दूर होजाता है॥

इससे अधिक सनातनधर्मसेवन, सत्यभाषण, वेद और उपनिषद्ग्रन्थों का पढना, सत्संग, अग्निहोत्र सन्ध्योपासन, ईश्वर की शरणता और उसका नामस्मरण भीतरी शौच है॥

मिट्टी और पानी आदि से शरीर वस्त्र स्थान और पात्र आदि को शुद्ध रखना और शुद्ध अन्न पान आदि का भोजन करना बाहिर का शौच है॥

उपरोक्त प्रातःकृत्य को समाप्त करके तब आबादी से बाहिर मल मूत्र त्याग के वास्ते दिशाजंगल जावें॥

मूत्र करते समय नदी से १० हाथ, और तीर्थ से ४० हाथ, और मल करते समय नदी से ४० हाथ और तीर्थ से १६०

हाथ दूर जाकर शुद्ध * मिट्टी और जल का पात्र साथ लेवें। और उनको ज़रा फासले पर रखकर यज्ञोपवीत को दाईं कान पर धर कर, कीडे,मकोडे से रहित. और सूखी घास वाले स्थान पर, सुबह शाम और दिन को उत्तर की तरफ, और रातको दक्षिण की तरफ मुंह करके मल वा मूत्र छोडें, और इस वखत सिर को चादरी से ढाम्पें। और मौन धारण करके मुंह और नाक को बन्द रखकर दुर्गन्धि से बचें। उठते समय लिंगस्थान को बाईं हाथ में रख कर मिट्टी और जलपात्र उठाकर पहिले जलपात्र में तर्जनी डालें। और फिर शौच करें लिंगस्थान को १ दफा और गुह्यस्थान को ३ दफा जल और मिट्टी से शुद्ध करें। फिर और किसी जगह जाकर बाईं हाथ को दसबार और फिर दोनों हाथों को सातबार नई मिट्टी और जल से धोयें।

केवल मूत्रत्याग के समय एक मिट्टी से लिंगस्थान को, और तीन से बाईं हाथ को, और दोनों हाथों को दोवार शुद्ध करें ॥

मार्ग में भस्म. गोस्थान, हल से खोदे स्थान, जल, पर्वत, देवस्थान के खडरात, चियूंटीयों की मिट्टी, सब्ज़ घास, और कीडों के बिलों पर, मल मूत्र न करना चाहिये ॥

ब्राह्मण को गौरवर्ण की, क्षत्रिय को रक्तवर्ण की, वैश्य को हरिद्रवर्ण की. और शूद्र और स्त्रियों को कृष्णवर्ण की मिट्टी होनी चाहिए ॥

परदेश में जो जल हो, जैसी मिट्टी मिले, उसी से शौच करना योग्य है ॥

इस के बाद पैरों को ३ बार मिट्टी से धोयें। और पानी से

---

* मिट्टी नदी के किनारे की रेतली वा शौरज़मीन की न हो। और चूहों आदि कीडों की निकाली हुई, रास्ते पर की कीचड वा किसी दूसरे आदमी की बाकी बचा हुई भी न हो ॥

१२ कुल्लियां करके बाईं तरफ जमीन पर फेंकें। फिर ३ आचमन और उपस्पर्शन करके प्राणायाम करें। और जलपात्र को ३ बार मिट्टी से शुद्ध करें ॥

यह शौचविधि स्वस्थ शरीर वाले पुरुष के लिये है । रोगी पुरुष जैसा कर सकें, वैसा ही करें ॥

अब दन्तधावन (दांतन) जो १२ अंगुल लम्बा और कनिष्ठा के समान मोटा हो, लाकर धोवें इस से उत्तर की तरफ मुख करके और दान्तों आदि को साफ करके ६ कुल्लियां करें ॥

दांतन काटने का मन्त्र :—

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजा पशु वसूनि च ।
ब्रह्मप्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते ॥

याद रखें. कि सूर्य निकलने के बाद और प्रतिपत्–षष्ठी–अष्टमी–चतुर्दशी–पूर्णिमा–अमावसी–संक्रान्ति-आतवार-व्रत-उपवास–और श्राद्ध करने के दिन दातन न किया करें ॥

गुरुस्तुतिः ॥

ॐ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥
अभिप्रेतार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरैरपि ।
सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ १ ॥
ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्त्तिं
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥ २ ॥
स्मारं स्मारं जनिमृतिभयं जातनिर्वेदवृत्ति-
र्ध्यायं ध्यायं पशुपतिमुमाकान्तमन्तर्निषण्णम् ।
पायं पायं सपदि परमानन्दपीयूषधारां
भूयो भूयो निजगुरुपदाम्भोजयुग्मं नमामि ॥ ३ ॥
(१ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुः साक्षान्महेश्वरः ।
गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ४ ॥
२ अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ५ ॥
३ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानांजनशिलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ६ ॥
श्लोकत्रयं पठेत्प्रातः गुरुपादाम्बुजं स्मरन् ।
त्रिवर्गफलभागत्र मृतौ मोक्षपदं व्रजेत् ॥)
हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ।
सर्वदेवस्वरूपाय तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ७ ॥

स्थावरं जंगमं व्याप्तं यत्किंचित्सचराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ८ ॥
चिन्मयं व्यापितं सर्वं यत्किंचित्सचराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ९ ॥
सर्वश्रुतिशिरोरत्नविराजितपदाम्बुजः ।
वेदान्ताम्बुजसूर्यो यः तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १० ॥
चैतन्यः शाश्वतः शान्तो व्योमातीतो निरंजनः ।
बिन्दुनादकलातीतः तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ११ ॥
ज्ञानशक्तिसमारूढः तत्त्वमालाविभूषितः ।
भुक्तिमुक्तिप्रदाता च तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १२ ॥
अनेकजन्मसंप्राप्तकर्मबन्धविदाहिने ।
आत्मज्ञानप्रदानेन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १३ ॥
शोषणं भवसिन्धोश्च ज्ञापनं सारसम्पदः ।
गुरोः पादोदकं सम्यक् तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १४ ॥
न गुरोरधिकं तत्त्वं न गुरोरधिकं तपः ।
तत्त्वज्ञानात्परं नास्ति तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १५ ॥
मन्नाथः श्रीजगन्नाथो मद्गुरुः श्रीजगद्गुरुः ।
मदात्मा सर्वभूतात्मा तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १६ ॥
गुरुरादिरनादिश्च गुरुः परमदैवतम् ।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १७ ॥
नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्ष शिवरूपिणम् ।
शिरसा योगपीठस्थं धर्मकामार्थसिद्धये ॥ १८ ॥
श्रीगुरु परमानन्दं वन्दाम्यानन्दविग्रहम् ।
यस्य सान्निध्यमात्रेण चिदानन्दायते पुमान् ॥ १९ ॥
नमोऽस्तु गुरवे तस्मा इष्टदेवस्वरूपिणे ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ॥ २० ॥
श्रीगुरुं ज्ञानसत्सिन्धुं दीनबन्धुं दयानिधिम् ।
देवीमन्त्रप्रदातारं ज्ञानानन्दं नमाम्यहम् ॥ २१ ॥

नमस्ते नाथ भगवन् शिवाय गुरुरूपिणे ।
विद्यावतारसंसिद्ध्यै स्वीकृतानेकविग्रह ॥ २२ ॥
नवाय नवरूपाय परमार्थैकरूपिणे ।
सर्वाज्ञानतमोभेदभानवे चिद्घनाय ते ॥ २३ ॥
स्वतन्त्राय दयाक्लृप्तविग्रहाय परात्मने ।
परतन्त्राय भक्तानां भव्यानां भव्यरूपिणे ॥ २४ ॥
विवेकिनां विवेकाय प्रकाशाय प्रकाशिनाम् ।
ज्ञानिनां ज्ञानरूपाय विमर्शाय विमर्शिनाम् ॥ २५ ॥
पुरस्तात्पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्यामुपर्यधः ।
सच्चिदानन्दरूपेण विधेहि भवदासनम् ॥ २६ ॥
ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
ज्ञानमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥ २७ ॥
यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशयन्ते महात्मनः ॥ २८ ॥
अहं देवो न चान्योस्मि ब्रह्मैवाहं न शोकभाक् ।
सच्चिदानन्दरूपोहं नित्यमुक्तस्वभाववान् ॥ २९ ॥
संसारसागरसमुत्तरणैकमन्त्रं
ब्रह्मादियोगिमुनिपूजितसिद्धिमन्त्रम् ।
दारिद्र्यदुःखभयरोगविनाशमन्त्रं
वन्दे महाभयहरं गुरुराजमन्त्रम् ॥ ३० ॥

॥ इति गुरुस्तुतिः ॥

देवताओं का प्रणाम ॥

आराधयामि मणिसन्निभमात्मलिंगं मायापुरीहृदयपंकजसन्निविष्ठम् । श्रद्धानदीविमलचित्तजलाभिषेकैर्नित्यं समाधिकुसमैर्न पुनर्भवाय ॥

जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यऽधर्मं न च मे निवृत्तिः । त्वया हृषीकेश हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोस्मि तथा चरामि ॥

मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नरसिंहोथ वामनः । रामो रामः श्रीकृष्णश्च बुधः कल्किस्तथैव च ॥ एतानि दश नामानि प्रातःकाले तु यः पठेत् । स मुक्तः सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं च गच्छति ॥

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारिर्भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च । जीवोथ शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वे सुराः शान्तिकरा भवन्तु ॥

केशवः पुण्डरीकाक्षो माधवो मधुसूदनः । चत्त्वारीमानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ॥ अचलां श्रियमाप्नोति विष्णुलोकं च गश्छति ॥

अहल्या द्रौपदी तारा सीता मन्दोदरी तथा । पंच कन्याः स्मरेन्नित्यं महापातकनाशिनीः ॥

गंगा गौरी तु गायत्री गीता गरुडवाहनः । पंचैतानि गकाराणि नाशयन्ति महद्भयम् ॥

पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः । पुण्यश्लोका च वैदेही पुण्यश्लोको जनार्दनः ॥

कार्कोटनागराजस्य दमयन्त्या नलस्य च । ऋतुपर्णस्य राजर्षेः कीर्तनं कलिनाशनम् ॥

कार्त्तवीर्य्यार्ज्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रभृत् योऽस्य संकीर्त्तयेन्नाम प्रातरुत्थाय मानवः । न तस्य वित्तनाशं स्याद्धृतं नष्टं च लभ्यते ॥

लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकतरुधन्विन्तरिश्चन्द्रमाः। धेनुः कामधुघा सुराः सुरगजो रम्भा च दिव्याङ्गना। अश्वः सप्तमुखस्तथा हरिधनुः शङ्खो विषं चामृतं। रत्नानीति चतुर्दश प्रतिदिन कुर्वन्तु मे मङ्गलम् ॥

दिवा रक्षतु मां सूर्यो रात्रौ रक्षतु चन्द्रमाः। प्रातः काले च चामुंडा सायं काले जनार्दनः॥

प्रभातको वेदपाठी ब्राह्मण,सुन्दरभाग्यवती स्त्री, अग्नि, कामधेनु, और अग्निधारी पुरुषका दर्शन आपदाओंसे बचाता है॥

जागकर दही, घी,दर्पण, सपेद सरसों, विल्व, गोरोचन,फूलमाला, इनका दर्शन और स्पर्श शुभकारी है ॥

ब्राह्मण, गौ, अग्नि, फूलमाला, घी, सूर्य, जल, और राजा,-यह आठ मांगलीक पदार्थ हैं भोजनके समय इनका दर्शन आयु और धर्मको बडाता है ॥

(दंड कसरत)

लाघवं कर्मसामर्थ्यं विभक्तघनगात्रता।
दोषक्षयोऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुपजायते ॥ (इत्यादि)

दंडकसरत करनेसे देहमें हल्कापन, काम करनेकी ताकत, अलग २ कठोर अंगोंका होना, वात पित्त कफके दोषोंका क्षय, जाठर अग्निकी वृद्धि, इतने गुण हैं ॥

इससे दृढ गात्र वाले प्राणीको रोग कदाचित् नहीं होता,भोजनभी शीघ्र पचता है, इससे बुढापा जल्दी नहीं आता, चिकने (तरपदार्थ) खाने वाले और बली पुरुषोंको सदैव हितकारी है।

स्थूलता (मुटापा) हरण करनेका उपाय इससे अन्य नहीं, वसन्त और शीत कालमें व्यायाम निरन्तर हित करता है। परन्तु अन्य ऋतुओंमें भी अपने बलके अनुसार बलार्द्ध पर्यंत अर्थात व्यायाम करते २ हृदयकी प्राणवायु जब मुखमें आजाये, मुख सूखने लगे,माथे नाक शरीरके जोडों और कक्षोंमें पसीने आजावें तबतक व्यायाम करें ॥ शुभमस्तुसर्वजगताम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

॥ अथ स्नानविधिप्रारम्भः ॥

अब नदी पर जाकर पूर्व दिशाके सन्मुख ठहरकर स्नान विधि का आरम्भ करें

हाथोंको धोयें भुवनपुत्री विश्वकर्मा ऋषिः विश्वकर्मा देवता त्रिष्टुप् छंदः । ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वत-स्पात् । सं बाहुभ्यां धमति संपतत्रैर्द्या-वाभूमी जनयन्देव एकः ॥

बायां पाद धोयें ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमू-र्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे । सहस्र-नाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधा-रिणे नमः ॥

दायां पाद धोयें ॐ नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने । नमस्ते केशवानन्त वासुदेव

नमोस्तुते ॥ १२ कुल्लियोंसे मुखशोधन करें ।

जल उठा कर पढें गंगाप्रयागगयनैमिषपुष्करा-दितीर्थानि यानि भुवि सन्ति हरिप्रसा-दात् । आयान्तु तानि करपद्मपुटे मदीये प्रक्षालयन्तु वदनस्य निशाकलङ्कम् ॥

उसी जल से मुंह धोयें सप्तधृतिर्वारुणिः ऋ० ब्रह्मण-स्पतिर्देव० गायत्री छं० मुखप्रक्षालने विनियोगः ।

तीर्थे स्नेयं तीर्थमेव समानानां भवति ॥ मा नः शँसोऽअररुषो धूर्तिः प्रणङ्मर्त्यस्य । रक्षा णो ब्रह्मणस्पते ॥ यज्ञोपवीतको हाथोंके अंगूठोंमें रखकर ३ बार मन्त्र पढते धोयें ओं गायत्र्यै नमः । ओं भूर्भुवःस्वस्तत्सवितुर्वरेण्यं भ-र्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोद-यात् ओं ३ ॥ यज्ञोपवीतको प्रथम दाई भुजामें फिर कण्ठमें डालें यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजाप-तेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यं प्रति-मुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वोपवीतेनोपन-

ह्यामि ॥ 'तद्विष्णोः' मन्त्रसे धोकर अनन्तका नमस्कार करें।

"अनन्तगुणरत्नाय विश्वरूपधराय च । महात्मने स्वरूपाय अनन्ताय नमो नमः ॥"

गायत्री मन्त्रसे ही शिखा खोलें धोयें और बान्धें

अब (*) इस निशानसे इस निशानतक उपस्पर्शन है (याद रखें कि जितनीबार दिन वा रात्रिमें भी मल मूत्र त्यागें उतनी बार अपने२ मन्त्रोंसे हाथ पैर मुख यज्ञोपवीतको जलका स्पर्श करके उपस्पर्शन और प्राणायाम किया करें ॥)

तीन आचमन करें ... ... ओं ओं ओं

माथे पर दो बार मार्जन करें ... ... ओं ओं

बायें हाथमें जल रखकर दायें हाथकी तर्जनी और अंगूठेसे नथनोंको शुद्ध करें } ... ओं भूः

अंगूठे और अनामिकासे आंखोंको शुद्ध करें ... ओं भुवः

अंगूठे और कनिष्टासे कानोंको शुद्ध करें ... ओं स्वः

हथेलीसे नाभिको शुद्ध करें ... ... ओं महः

हथेलीसे ही हृदयको शुद्ध करें ... ... ओं जनः

सब अङ्गुलियोंसे सिरको शुद्ध करें ... ... ओं तपः

अङ्गुलियोंसे ही कन्धोंको शुद्ध करें ... ओं सत्यम् (*)

प्राणायाम करें (प्राणायामकरनेकी विधि सन्ध्यामें देखिये

ओंभूः ओंभुवः ओंस्वः ओंमहः ओंजनः ओं तपः ओंसत्यम् । ओं तत्सवितुर्वरेण्यं

भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचो-दयात् ॥ ॐ आपोज्योती रसोमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् । पू० १, कु० २, रे० ३, नमस्कार धरकर पढ़ें ॐ ब्रह्मणोऽग्न्यादयः ॥ नमो अग्नये अ-प्सुषदे नम इन्द्राय नमो वरुणाय नमो वारुण्यै नमोऽपां पतये नमोऽद्भ्यः ॥

उपस्थान करें (शुनः शेप आजीगर्तिः कृत्रिमो वैश्वा-मित्रो देवरात ऋषिः।) अवभृथे त्रिष्टुप् वरुणः ॥

उरुं हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्था-मन्वेतवा उ । अपदे पादा प्रतिधातवेऽ-करुतापवक्ता हृदयाविधश्चित् ॥

हाथोंसे जलका ३ बार आवर्तन करें यमस्य राज्ञो ज-गती वरुणः ॥ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो देवः सविता बृहस्पतिर्विश्वे देवा मरुतो मुञ्चन्तु स्वर्काः ॥

काम-क्रोध-लोभ-मोह आदि शत्रुओंके नाशका ध्यान करके ३ वार जलाञ्जलि उठाकर बाईं तरफ पृथिवीपर फेंकें ॥

निचाङ्कुणस्य शुनः शेपस्य यजुरापः ॥

सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु । दुर्मित्रियस्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥ अञ्जलि धरकर पढ़ें

(देवासुराणां राजर्षीणां) वसिष्ठस्य जगती वरुणः। अञ्जलिः ॥ यत्किं चेदं वरुण दैव्ये जनेऽभिद्रोहं मनुष्या३श्चरामसि । अचित्ती यत्तव धर्मा युयोपिम मा नस्तस्मादेनसो देव रीरिषः ॥

आक्रम्य वाजिन् पृथिवीमग्निमिच्छ रुचा त्वम् । भूम्या वृत्वाय नो ब्रूहि यतः खनेम तं वयम् ॥

इस मंत्रसे मिट्टीको पाहिले जल छिडककर शुद्ध करें। फिर इसी मिट्टीके तीन भाग बनाकर पहिले भागपर जल छिडकें (क)

विश्वामित्र ऋ० सविता दे० गायत्रं छं० मृदभिमन्त्रणे विनियोगः ।

ओं गायत्र्यै नमः ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ओं ३ ॥दूसरे भागपर जल छिडकें (ख)

त्रितस्य महापांक्तिरादित्याः ॥ आदित्या अव

हि ख्याताधि कूलादिव स्पशः । सुतीर्थ-मर्वतो यथानु नो नेषथा सुगमनेहसो व ऽऊतयः सुऽऊतयो वऽऊतयः ॥
तीसरे भागपर जल छिडकें (ग) मेधातिथेर्गायत्रं विष्णुः (देवो वा) अतो देवा अवन्तु नो यतो वि-ष्णुर्विचक्रमे । पृथिव्याः सप्त धामभिः ॥
तीसरे (ग) भागके ४ हिस्से करके एक हिस्सा पूर्वकी तरफ जल में फेंकें भर्गस्य (प्रागाथस्य) बृहती इन्द्रः ॥
यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि । मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिर्विद्विषो वि-मृधो जहि ॥ दूसरा हिस्सा जलमें दक्षिणकी तरफ फेंकें

शासस्यानुष्टभौ विमृध इन्द्रः ॥

स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधो वशी । वृषेन्द्रः पुर एतु नः सोमपा अभयंकरः ॥
तीसरा हिस्सा जलमें पश्चिमकी तरफ फेंकें वि रक्षो वि मृधो जहि वि वृत्रस्य हनू रुज । वि म-न्युमिन्द्र वृत्रहन्नमित्रस्याभिदासतः ॥ चौथा हिस्सा जलमें उत्तरकी तरफ फेंकें वसुक्रस्य त्रिष्टुबिन्द्रः ॥
इदं सु मे जरितरा चिकिद्धि प्रतीपं शापं

नद्यो वहन्ति । लोपाशः सिंहं प्रत्यंच-मत्साः क्रोष्टा वराहं निरतक्त कच्चात् ॥
अब दूसरी (ख) मिट्टी और जलसे, नाभिस्थानसे ऊपरके सब अङ्गोंका शुद्ध करें

यज्ञस्यानुष्टुप् मृत्तिका॥

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे। उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना ॥ मृत्तिके त्वां च गृह्णामि प्रजया च धनेन च। मृत्तिके ब्रह्मदत्तासि कश्यपेनाभिमन्त्रिता ॥ मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्। वाचा कृतं कर्मकृतं मनसा यच्च चिन्तितम् ॥ मृत्तिके देहि मे पुष्टिं त्वयि सर्वं प्रतिष्ठितम्। त्वया हृतेन पापेन ब्रह्मलोकं व्रजाम्यहम् ॥
पहिली (क) मिट्टीमें से थोडीसी मिट्टीसे तिलक करें।

कुत्सस्य रुद्रो जगती भस्मानुलेपनादौ विनियोगः॥
मा नस्तोके तनये मा न आयौ मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा

हवामहे ॥

उसी (क) मिट्टीकी थोडीसी मिट्टीसे बायें कन्देको शुद्ध करें

ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः

उसी (क) मिट्टीसे दायें कन्देको शुद्ध करें

ओं महः ओं जनः ओं तपः

उसी (क) मिट्टीसे हृदयको शुन्द्ध करें

ओं सत्यम्

अब गोबर और जलसे शरीरको शुद्ध करें

विश्वामित्रस्य माहापांक्तिर्गोमयं गोमयानुलेपनादौ विनियोगः ॥

अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां रसं वने। तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम्। त्वं मे रोगांश्च शोकं च पापं च नुद गोमय। पवित्राणां पवित्रेण शुध्यामि पृथिवीमि-माम् ॥ अपामार्ग (ओंगा) से अगों प्रत्यंगोंको शुद्ध करें

सिन्धुद्वीपस्यानुष्टुबपामार्गः ॥

अपाघमप किल्विषमप कृत्यामपो रपः। अपामार्ग त्वमस्मदप दुःष्वप्न्यँ सुव ॥

दूर्वासे शुद्ध करें

अग्निदृष्टे दूर्वेष्टका (पत्नी) देवत्ये द्वेऽनुष्टुभौ ॥

काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुष-स्परि । एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्रेण श-तेन च ॥ या शतेन प्रतनोषि सहस्रेण विरोहसि । तस्यास्ते देवीष्टके विधेम ह-विषा वयम् ॥

दर्भांकुरोंसे शरीरको जल छिडकें विरिञ्चिना सहो-त्पन्न परमेष्टिनिसर्गज, । नुद पापानि सर्वाणि दर्भ स्वस्तिकरो भव ॥

अञ्जलि धरकर तीर्थका आवाहन करें

तीर्थस्यावाहनं कुर्यात्तत्प्रवक्ष्याम्यनन्त-रम् । कुरुक्षेत्रं गया गङ्गा प्रभासं पुष्करा-णि च ॥ तीर्थान्येतानि सर्वाणि स्नान-काले भवन्तु मे । गंगे च यमुने चैव गो-दावरि सरस्वति नर्मदे सिन्धुकावेरि ज-लेस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥ यन्मे भुक्तमसा-धूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रहात् । यन्मया म-नसा वाचा कर्मणा दुष्कृतं कृतम् ॥ तन्मे इन्द्रो वरुणो बृहस्पतिः सविता च पुनातु॥

नमस्कार करें   प्रपद्ये वरुणं देवमम्भसां पतिमूर्जितम् ॥ याचितं देहि मे तीर्थं सर्वपापापनुत्तये । रुद्रान्प्रपद्ये वरदान्सर्वानप्सुषदस्त्वहम् ॥ सर्वानप्सुषदश्चैव प्रपद्ये प्रणतः स्थितः । देवमप्सुषदं वह्निं प्रपद्येऽघ निसूदनम् ॥ आपः पुण्या पवित्राश्च प्रपद्ये शरणं तथा । रुद्रश्चाग्निश्च सर्पाश्च वरुणस्त्वाप एव च ॥ शमयन्त्वाशु मे पापं पुनन्त्वेते सदा मम । इत्येवमुक्त्वा कर्तव्यं ततः संमार्जनं जले ॥

अब (क) मिट्टी और चलूंबर पानी उठाकर पढें ।

ॐ अपां पतये विद्महे पाशपाणये धीमहि । तन्नो वरुणः प्रचोदयात् ३ ॥

लकीरों वाली जगहपर मास, कृष्णपक्ष वा शुक्लपक्ष, और तिथि के नाम लेने चाहिये । अंगोचा कन्धेपर रखकर नदीमें उतरते पढें

ॐ तत्सद्ब्रह्म अद्य तावत्तिथावद्य—मासस्य – पक्षस्य तिथौ — आत्मनो वाङ्मनः कायोपार्जितपापनिवारणार्थं श्रीनारायणप्रीत्यर्थं वितस्ताप्रवाहे(गंगाप्रवाहे) स्ना·

नमहं करिष्ये । मनमें यह निश्चय करना कि नदी मुझे स्नानकी आज्ञा देती है:- ओं कुरुष्व ॥

चलूंके जलको नदीमें फेंककर विष्णुका ध्यानकरके और जलपर 'ओं' लिखकर गोतह मारें ॥

मेधातिथेः काण्वस्य गायत्रं विष्णुः ॥

ओं तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ॥ तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते । विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥

माथेपर सात मार्जन करें ओं भूः१ ओं भुवः२ ओं स्वः३ ओं महः४ ओं जनः५ ओं तपः६ ओं सत्यम्७ ।

प्राणायाम करके पूर्यकी तरफ उपस्थान करें

वामदेवस्य जगती सूर्यः ।

हँसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदातिथिर्दुरोणसत् । नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत् ॥ सूर्य देवताको नमस्कार करें

नमो धर्मनिदानाय नमः सुकृतसा-

क्षिणे। नमः प्रत्यक्षदेवाय भास्कराय नमो नमः॥

एकबार अंगुलियोंके सिरों परसे जलाञ्जलि देवें ओं नमो देवेभ्यः। यज्ञोपवीतको गर्दन और दो अंगूठोंमें रखकर, २ जलाञ्जलियां हाथोंके दर्मियानसे देवें 'कण्ठोपवीती।' स्वाहा ऋषिभ्यः। यज्ञोपवीतको थनोंके दर्मियानसे बाईं बाजोंमें रखकर ३ जलाञ्जलियां बाईं अंगूठे और तर्जनी के दर्मियानसे देवें 'अपसव्येन।' स्वधा पितृभ्यः। यज्ञोपवीतको थनोंके दर्मियानसे दाईं बाजोंमें रखकर ३ बार जलाञ्जलियां देवें 'सव्येन।' आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं ब्रह्माण्डं सचराचरं जगत्तृप्यतु३॥

किनारेपर चढकर पहिली अवशिष्ट (क) मिट्टीका तिलक लगाते मन्त्र पढें, फिर उसको तत्कालंही जलसे धो डालें

यत्त्वगास्थिगतं पापं जन्मान्तरकृतं च यत्। तन्मे हरस्व कल्याणि मूर्ध्नि स्पर्शेन वैष्णवि॥ वस्त्रोंको जल छिडककर धारण करें

विश्वामित्रस्य त्रिष्टुप् विश्वेदेवाः॥

युवा सुवासाः परिवीत आगात्स उ श्रेयान्भवति जायमानः। तन्धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो३मनसा देवयन्तः॥

शिरका जल देवता, छातीका पितर, नाभिका यक्ष और गन्धर्व, और उसके नीचेका जल राक्षस पीते हैं । इस कारण वस्त्रसे अङ्गोंको न पूंछना चाहिए ॥

अङ्गोंचे और स्नानपटको देव ऋषि, और पितर तर्पण 'जो सन्ध्याके अन्तपर करना है' से पहले नहीं निचोडें ॥ और श्राद्ध के दिन श्राद्धकरके निचोडें ॥

गोविन्देति सदा स्नानं गोविन्देति सदा जपः । गोविन्देति सदा ध्यानं सदा गोविन्दकीर्तनम् ॥ गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे गोविन्द गोविन्द रथांगपाणे । गोविन्द गोविन्द मुकुन्द कृष्ण गोविन्द गोविन्द नमो नमस्ते ॥ कृष्णाय वासुदेवाय देवकी नन्दनाय च । नन्दगोपकुमाराय श्रीकृष्णाय नमो नमः ॥ कृष्ण कृष्णेति कृष्णेति यो मां स्मरति नित्यशः । जलं भित्त्वा यथा पद्मं नरकादुद्धरामि तम् ॥ श्रीकृष्ण विष्णो नृहरे मुरारे प्रद्युम्न सङ्कर्षण वासुदेव । अजाऽनिरुद्धाऽखिल विश्वमूर्ते त्वं पाहि नः सर्वभयादऽजस्रम् ॥ यस्य केशेषु जीमूता नद्यः सर्वांगसन्धिषु । कुक्षौ समुद्राश्चत्वारस्तस्मै तोयात्मने नमः ॥ जले विष्णुः स्थले विष्णुर्विष्णुराकाशमंडले । स्थाने स्थाने भवेद्विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥ कैवल्योपनिषत्, नारायणोपनिषत, विणुसहस्रनाम, पांडवगीता, मुकुन्दमाला, श्रीगीता, आदि पाठ यहांपर वा सन्ध्याके समाप्तपर पढें ॥

॥ इति स्नानविधिः ॥

॥ अथ सन्ध्योपासनप्रारम्भः ॥

सूर्यके सन्मुख नमस्कार धरकर पढ़ें उों श्रीमहागायत्र्यै नमः । सावित्र्यै नमः । सरस्वत्यै नमः ॥

उों प्रणवस्य ऋषिर्ब्रह्मा गायत्रं छन्द एव च । देवोऽग्निर्व्याहृतिषु च विनियोगः प्रकीर्तितः ॥ प्रजापतेर्व्याहृतयः पूर्वस्य परमेष्ठिनः । व्यस्ताश्चैव समस्ताश्च ब्राह्ममक्षरमोमिति । व्याहृतीनां समस्तानां दैवतं तु प्रजापतिः । व्यस्तानामयमग्निश्च वायुः सूर्यश्च देवताः ॥ छन्दश्च व्याहृतीनामेकाक्षराणामुक्ताख्यं द्व्यक्षराणामत्युक्ताख्यम् ॥ विश्वामित्र ऋषिश्छन्दो गायत्रं सविता तथा । देवतोपनये जप्ये गायत्र्या योग उच्यते ॥ आवाहयामि गायत्रीं सर्वपापप्रणाशिनीम् । न गायत्र्याः परं जप्यं न व्याहृतिसमं हुतम् । आगच्छ वरदे देवि जपे मे सन्नि-

धौ भव। गायन्तं त्रायसे यस्माद्गायत्री त्वं ततः स्मृता। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च बृहस्पत्याप एव च ॥ इन्द्रश्च विश्वेदेवाश्च देवताः समुदाहृताः। एवमार्षं छन्दो दैवतं विनियोगं चानुस्मृत्य ॥

गायत्र्या शिखामाबध्य गायत्र्यैव समन्ततः ।
आत्मनश्चापः परिक्षिप्य प्राणायामं कुर्य्यात ॥

गायत्री मन्त्रसे बोधी धोयें, और बोधीकी ब्रह्मघांट भी लगायें। फिर इसी मन्त्रसे चारोंओर, और अपने आपको जल छिड़कें। यदि गज आदि रोगोंसे बोधी न होगी। तो कुशाकी बोधी घांट लगाकर धरनी चाहिये ॥

अञ्जलि धरकर गायत्रीका आवाहन करें।

ओजोसीति गायत्रीमावाह्य देवानामार्षम् ॥

ॐ ओजोसि सहोसि बलमसि भ्राजोसि देवानां धाम नामासि विश्वमसि विश्वायुः सर्वमसि सर्वायुरभिभूः ॥

प्राणायाम करें

(एक प्राणायाममें पूरक कुम्भक और रेचक किये जाते हैं।)

पूरक=दाईं अंगूठेसे दायें नथनेको बन्दकरके, बायें नथनेसे सांसको शनैः २ अन्दर खींचते जाना और रक्तवर्ण (सुर्खरंग) ब्रह्माजीका नाभिस्थान (नाफ) पर ध्यानकरते एकबार मंत्रका पढना ॥

कुम्भक=कनिष्ठा अनामिका और अंगूठेसे दोनों नथनोंको बन्दकरके सांस (प्राण) को हृदयमें ठहराकर, हृदयकमलपर

नीलवर्ण विष्णुका ध्यानधरते, दो बार मन्त्रको जपते जाना ॥

रेचक = दायें नथनेपरसे अंगूठेको उठाकर बिल्कुल आहिस्ता २ सांस छोडते जाना, और ललाटमें सहस्रदलकमल (हजार-बर्ग वाले कवल) पर स्फटिक (बिल्लौर) वर्ण शिवजीका ध्यान धारण करते तीन बार मन्त्रका पढना ॥

प्राणायाम करनेसे अनेक प्रकारके रोग (रूहानी और जिस्मानी) दूर हो जाते हैं। बल्कि हृदयमें बल और आनन्द पैदा होता है। खून साफ हो जाता है ॥ जिसतरह पर्वतके धातुओं की सफाई अग्निसे होजाती है, इसीतरह शारीरिक तमाम रोगों का और वासनामें बीज रूप दुष्कर्मोंका नाश प्राणायामसे हो जाता है। क्योंकि हृदयमें प्राण रोकनेसे इस प्राणवायुसे अग्नि पैदा होजाती है, और उस अग्निसे जल उत्पन्न होजाता है, फिर मनुष्यका अन्तःकरण इन तीनों (प्राणवायु अग्नि और जल) के बलसे शुद्ध (मलरहित) होजाता है ॥

जिसतरह सूर्यके सामने आये बादल ब्रह्माण्डवायुसे कभी२ पतले होते २ बिलकुल क्षीण होजाते हैं। इसी तरह विवेक और ज्ञानपर जो अविद्या आदि क्लेशोंके परदे पुरुषको संसारमें जकडे हुए हैं, वह प्राणायामके अभ्याससे दुर्बल होते २ क्षीण हो जाते हैं। प्राणायामसे बढकर कोई तप नहीं, इससे मल धोए जाते हैं। परमात्माके बीच मन और आत्माकी धारणा होती है। ज्ञानकी योग्यता बढती आती है, और मनुष्य एक ऐसे आनन्दमें मग्न होजाता है। जो वर्णनसे दूर है ॥

ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः ओं महः ओं जनः ओं तपः ओं सत्यं ओं तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ओं आपो ज्योती रसोमृतं ब्रह्म भूर्भुवःस्वरोम्॥

इसको पूरकमें एक बार, कुम्भकमें दो बार, रेचकमें तीन बार पढें।

अब प्रत्येक मन्त्रसे तीन २ बार आचमन करें:—
(आचमनका जल गोकर्ण (गायका कान)[देखो आकृति ३५] जैसा हाथ बनाकर उसमें उतना जल उठायें कि जितनेमें एक माषके दानेसे जियादा दाने न डूब सकें, ब्रह्मतीर्थसे 'ओं' बोल के तीन२बार ऐसे पीना चाहिये कि पीते समय शब्द न होजाये)

सायंके तीन आचमन :—

अग्निश्चमेत्यस्य रुद्र (याज्ञवल्क्य उपनिषद) ऋषिः। प्रकृतिश्छन्दः। अग्निमन्युमन्युपत्यहानि देवताः। आचमने विनियोगः ॥

ओं अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यदह्ना पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्याम्। पद्भ्यामुदरेण शिश्ना अहस्तदवलुम्पतु। यत्किञ्चिद्दुरितं मयीदमहं मामऽमृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा ओं, ओं, ओं,

प्रभातके तीन आचमन :—

सूर्यश्च मेत्यस्य नारायण (याज्ञवल्क्य उपनिषद) ऋषिः। सूर्यमन्युमन्युपतिरात्रयो देवताः। प्रकृतिश्छन्दः। आचमने विनियोगः ॥

ओं सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां।

पद्भ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तदवलुम्पतु । यत्किञ्चिद् दुरितं मयीदमहं मामऽमृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा ओं, ओं, ओं, ॥

मध्याह्नके तीन आचमन :—

आपः पुनन्त्वित्यस्य सिन्धुद्वीप ऋषिः । अष्टीछन्दः । आपः (पृथिवी) देवताः । आचमने विनियोगः ॥

ओं आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम् । पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्म पूता पुनातु माम् ॥ यदुच्छिष्टमभोज्यं वा यद्वा दुश्चरितं मम । सर्वं पुनन्तु मामापोऽसतां च प्रतिग्रहं जुहोमि स्वाहा ओं, ओं, ओं, ॥

अब मार्जन करें:—

(कुशाके विष्टरसे वा मध्यमा और तर्जनीके अगले पर्वों (पोरों) से जलबून्धोंके छिडकनेका नाम मार्जन है)

आपो हि ष्ठा तृचस्य सिन्धुद्वीप ऋषिः । गायत्रं छन्दः । आपो देवता । मार्जने विनियोगः ॥

ओं आपो हि ष्ठा मयोभुवः । हृदय पर १
ओं ता न ऊर्जे दधातन । पादों पर २

ओं महेरणाय चक्षसे ॥	ललाट पर	३
ओं यो वः शिवतमो रसः ।	ललाट पर	४
ओं तस्य भाजयतेह नः ।	पादों पर	५
ओं उशतीरिव मातरः ॥	हृदय पर	६
ओं तस्मा अरंगमाम वः ।	ललाट पर	७
ओं यस्य क्षयाय जिन्वथ ।	हृदय पर	८
ओं आपो जनयथा च नः ॥	पादों पर	९

अगले प्रत्येक मन्त्रसे प्रत्येक बार ललाटपर मार्जन करें

हिरण्यवर्णा इत्यस्य कश्यप ऋषिः । त्रिष्टुप्छन्दः । आपो देवता । मार्जने विनियोगः ॥

ओं हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका यासु जातः कश्यपो यास्विन्द्रः । या अग्निं गर्भं दधिरे विरूपास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु ॥

यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षयं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति । या अग्निं ग० ॥

यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् । या अग्निं गर्भं० ॥

शिवेन मा चक्षुषा पश्यतापः शिवया तन्वोपस्पृशत त्वचं मे । मधुश्च्युतः शुचयो याः पावकास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु ॥ (अगले ७ मन्त्र इसके भाष्यमें अधिक पाते हैं॥)

हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका विचक्रमुर्हित्वावद्यमापः । शतं पवित्रा विततान्यासां ताभिर्मा देवः सविता पुनातु ॥

अब ६ मन्त्र 'पावमानीः' नामक हैं:—

पवमान ऋषिः । सोमो देवता । अनुष्टुप्छन्दः ॥

ओं यः पावमानीरध्येति ऋषिभिः सम्भृतं रसम् । सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ॥ १ ॥ यः पावमानीरध्येति पवित्रकरणीरपाम् । तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥ २ ॥ पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघा हि घृतश्च्युतः । ऋषिभिः सम्भृतो रसो ब्राह्मणेष्वमृतं हितम् ॥ ३ ॥ पावमानीः स्वस्त्ययनीर्याभिर्गच्छति नन्दनम् । पुण्यांश्च भक्ष्यान्भक्षयत्य-

मृतत्वं च गच्छति ॥ ४ ॥ पावमानीर्दिशन्तु न इमं लोकमथो अमुम् । कामान्समर्धयन्तु नो देवैर्देवीः समाहृताः ॥५॥ येन देवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा । तेन सहस्रधारेण पावमान्यः पुनन्तु नः ॥ ६ ॥

।सिन्धुद्वीपस्याम्बरीषस्य वार्षम् । अब्दैवत्या । गायत्री । मार्जने विनियोगः ॥

ओं शन्नो देवीरभीष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभिस्रवन्तु नः ॥

अब्दैवत्यानुष्टुप्सोमपुत्रस्याध्वरस्य मार्जने विनि०॥

ओं शन्न आपो धन्वन्याः । ओं शन्नः सन्त्वनूप्याः ॥ ओं शन्नः समुद्रिया आपः । ओं शमु नः सन्तु कूप्याः ॥

देवश्रवसो यामायनस्य त्रिष्टुभापः मार्जने विनि०॥

ओं आपो अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु । विश्वं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीः । उदिदाभ्यः शुचिरापूत एमि ॥

सिन्धुद्वीप ऋ० अनुष्टुप्छ० आपो दे० मार्जने वि०॥

ओं इदमापः प्रवहत यत्किं च दुरितं मयि । यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम् ॥

आथर्वणस्य भिषजोऽनुष्टुप् आपः ।

ओं मुञ्चन्तु मा शपथ्या३दथो वरुण्या-दुत । अथो यमस्य पड्वीशात्सर्वस्माद्देवकि-ल्बिषात् ॥ गायत्री ॥ ओं यज्जाग्रद्यत्सुप्तः पापमभिजगाम सर्वस्मान्मा तस्मादेनसः प्रमुञ्चतु ॥

वामदेवस्य दधिक्राऽनुष्टुप् ।

ओं दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोर-श्वस्य वाजिनः । सुरभि नो मुखा करत्प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥

अघमर्षणम् । = बुरे कर्म और अभक्ष्यभक्षण आदि पापोंसे बचनेके मन्त्र :— जिस प्रकार अश्वमेध सोमयाग आदि यज्ञोंसे पाप नष्ट होजाते हैं उसी प्रकार अघमर्षण सूक्तसे सब पाप दूर होजाते हैं ॥ और यदि आपत्कालमें द्विजने शूद्रके घरमें अन्न खाया हो तो वह मनमें पछताने और सौ बार 'द्रुपदा' मन्त्र जपनेसे शुद्ध होता है ॥

तीन बार अञ्जलिमें जल उठाकर तीन बार मन्त्र पढते सिर से उस जलका वन्दनकरके जलमें फेंक देवें ॥ फिर गोकर्ण जैसे

हाथमें जल उठाकर उस जलको सूंघकर इसी मन्त्रको एक बार पढें, इस जलको न देखकर बाईं तरफ फेंकें। और बायें नथनेसे सांस बाहिर छोडकर पापपुरुषको शरीरमें से निकालें ॥

कोकिलस्य राजपुत्रस्यानुष्टुबापः सौत्रामण्यवभृथस्नानेऽघमर्षणे विनियोगः ॥

ओं द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव । पूतं पवित्रेणेवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः ॥

जलमें दो हाथ रखकर (अघमर्षण सूक्त) अर्थात् ऊपरका एक मन्त्र, और नीचेके तीन मन्त्र (द्रुपदा० ऋतंच० समुद्रा० सूर्याचन्द्र०) इन चार मन्त्रोंको पढते जलका आवर्तन (घुमाना) करें

माधुरछन्दसोघमर्षणो भाववृत्तमनुष्टुप् । अघमर्षणे विनियोगः ॥

ओं ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत । ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥ १ ॥

समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत । अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ॥ २ ॥

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्ष-

मथो स्वः ॥ ३ ॥

सातों मन्त्रोंसे सात बार माथेपर मार्जन करें।

ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः ओं महः ओं जनः ओं तपः ओं सत्यम् ॥

नीचेके मन्त्रसे तीन आचमन करें

ब्रह्मतिरश्चीनस्यानुष्टुप् परमात्मा आचमने विनि०॥

ओं अन्तश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः। त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ॥

अब **प्राणायाम** करें। फिर खडा होकर गायत्री मन्त्रसे तीन बार सूर्य मण्डलकी तरफ उछलकर तीन जलाञ्जलियां देवें ॥(उदय और अस्तमें तीस करोड राक्षस (मन्देहा नाम) सूर्यदेवतासे लडनेको आते हैं। इस कारण यह जल वज्र बनकर उनको हटाता है। यह बात जानकर जो विप्र उपासना करता है उसकी बडी आयु होती है। और वह पापोंसे छूट जाता है ॥)

ओं भूर्भुवः स्वस्तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ओं ३ ॥

जलाञ्जलि उठाकर उसमेंसे जल छोडते और दाईं ओरसे प्रदक्षिणा करते विपरीतगायत्री पढें ॥ (राक्षसोंपर उपरका जल फेंकने समय गायत्री मन्त्र अस्त्र बनता है उसी अस्त्रको इस उलटे मन्त्रसे वापस लाया जाता है ॥)

तृयादचोग्र नः यो योधि हिमधी स्यन्दे गौभ तर्यरेवंतुवित्सत ॥

अब सायं और प्रातःका उपस्थान ॥

उप=ध्यान धारणासे ईश्वरके समीपमें ठहरकर, स्थान=उसकी स्तुति उपासनामें ठहरना ।

(प्रातः कालको खडा होकर और हथेलियां ऊपर करके, सायं कालको बैठके और हथेलियां नीचे करके, और मध्याह्नको बैठ के और हथेलियां उपर करके उपस्थान करना चाहिये । परन्तु तीनों काल बगल छुपे रहें ॥)

उपस्थानसे वाणी मन और शरीरसे उत्पन्न पाप नष्ट होजाते हैं। और मनुष्यको दैवी सम्पत् (श्रीगीता अ० १६ श्लो० १—३) प्राप्त हो जाती है। तथा आसुरी सम्पत् (श्रीगीता अ० १६ श्लो० ४) नाशको जाती है ॥)

प्रस्कण्वस्यानुष्टुप्सूर्यः उपस्थाने विनियोगः ।

ओं उद्वयं तमसस्परि ज्योतिष्पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योति-रुत्तमम् ॥

प्रस्कण्वस्य गायत्रं सूर्यः उपस्थाने विनियोगः ।

ओं उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति के-तवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥

कुत्सस्य त्रिष्टुप्सूर्यः

ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मि-त्रस्य वरुणस्याग्नेः । आ प्रा द्यावापृथिवी

अन्तरिक्षँ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥
दध्यङ्ङाथर्वणस्य त्रिष्टुप्सूर्यः ॥
ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतँ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमऽदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥
वामदेवस्य जगती परमात्मरूपः सूर्यो देवता ॥
ओं हँसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत् । नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत् ॥ अब मध्याह्नका उपस्थानः—
[सिंहीसंवत्सरीयस्य] विभ्राट् सौर्यस्य जगती सूर्यः ॥
ओं विभ्राड्बृहत्पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम् । वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः पिपर्त्ति बहुधा विराजति ॥
(नीचले १६ मन्त्रोंका नाम 'पुरुषसूक्त' है । एक मासतक इसके नित्य १६पाठ करनेसे मनुष्य गुरुतल्प गमनके पापसे छूट जाता है ॥ देखो मनुस्मृति अ० ११ श्लो० २५२)

अञ्जलि धरकर पढें

आनुष्टुबस्य सूक्तस्य त्रिष्टुबन्तस्य देवता। विश्वात्मा पुरुषः साक्षाद्दृषिर्नारायणः स्मृतः॥

ओं पुरुषमेधः पुरुषस्य नारायणस्यार्षम्॥

ओं सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांगुलम्॥१॥ पुरुष एवेदँ सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति॥ २ ॥ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः। पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि॥३॥ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः। ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि॥४॥ तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः॥५॥ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः॥ ६ ॥ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः। तेन देवा अयजन्त सा-

ध्या ऋषयश्च ये ॥७॥ तस्माद्यज्ञात्सर्व-हुतः संभृतं पृषदाज्यम्। पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्यान्ग्राम्याश्च ये ॥ ८ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दाँसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ ९ ॥ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः। गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥ १० ॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ॥ ११ ॥ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याँ शूद्रो अजायत ॥ १२ ॥ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥ १३ ॥ नाभ्या आसीदन्तरिक्षँ शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत। पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन् ॥ १४ ॥ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः

सप्त समिधः कृताः। देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥ १५ ॥ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥ १६ ॥

(शिवसङ्कल्पके अनेक फलोंमें से एक फल यह है कि एक मास तक नित्य एक २ पाठ करनेसे ब्राह्मण सोना चुरानेके पापसे छूट जाता है। मनुः अ-११ श्लो-२५१)

(शिवसंकल्पस्य) ब्रह्मणस्त्रिष्टुप्मनः उपस्थाने वि०॥

ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ १ ॥ येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिव० ॥ २ ॥ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिव० ॥ ३ ॥ येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञ-

स्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिव० ॥४॥ यस्मिन्नृचः साम यजूँषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः । यस्मिँश्चित्तँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिव० ॥ ५ ॥ सुषार·थिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीषु·भिर्वाजिन इव । हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिव० ॥ ६ ॥ अथ य एष ए·तस्मिन्मण्डले पुरुषो यश्चैष हिरण्मयः पु·रुषः । अथ य एष एतस्मिन्मण्डले पुरुषोऽयमेव स योऽयं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषः ॥ उपस्थान करें

(रुद्र ऋ० सूर्यो दे० त्रिष्टुप्छ० उपस्थाने विनि०)

शुक्रियं रुद्रस्य । य उदगात्पुरस्तान्महतो अर्णवाद्विभ्राजमानः सरिरस्य मध्ये स·मामृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मन·सा पुनातु । यद्ब्रह्मवादिष्म तन्मा मा·हिंसीत्सूर्याय विभ्राजाय वै नमो नमः ॥

अब गायत्री जप है ।

जपके आरम्भमें अङ्गन्यास करना होताहै ॥ नीचेके मन्त्रोंको पढते समय इन स्थानोंको हाथोंकी अंगुलियोंसे नोबतवार स्पर्श करें।

जिन स्थानोंके नाम मन्त्रोंके साथ हैं।

न्यासमें अङ्गोंकी पुष्टिकी प्रार्थना करनी चाहिये॥ अङ्गों पर 'अ' आदि देवता और 'भूः' आदि लोकोंका स्थान मानना चाहिये॥ बिना न्यासके जपफलका आधा भाग राक्षस लेजाते हैं॥

अङ्गन्यासः

ओं=(अ+उ+म्) अ नाभौ। (नाफको) उ हृदि। म शिरसि। (सिरको) ओं भूः पादयोः। ओं भुवः हृदि। ओं स्वः शिरसि॥

करन्यासः

ओं भूः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। अंगुलियोंसे अंगूठोंको
ओं भुवस्तर्जनीभ्यां नमः। अंगूठोंसे तर्जनीयोंको
ओं स्वर्मध्यमाभ्यां नमः। अंगूठोंसे मध्यमाओंको
ओं महः अनामिकाभ्यां नमः। } अंगूठोंसे अनामिकाओंको
ओं जनः कनिष्ठिकाभ्यां नमः। } अंगूठोंसे कनिष्ठाओंको
ओं तपः सत्यं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।
अंगूठोंसे हथेलियों और हाथों की पीठों को स्पर्श करें॥

अङ्गन्यासः

ओं भूः पादयोः। ओं भुवः जान्वोः। घुठनोंको ओं स्वः गुह्ये। मल छोडनेके स्थानको ओं महः नाभौ। ओं जनः हृदि। ओं तपः कण्ठे। ओं सत्यं शिरसि।

षडङ्गन्यासः

ॐ भूः हृदयाय नमः। हृदयको तर्जनी, मध्यमा और अनामिकाओंसे ॐ भुवः शिरसे स्वाहा। सिरको मध्यमाओं और अनामिकाओंसे ॐ स्वः शिखायै वषट्। बोधीको अंगूठोंसे ॐ महः कवचाय हुम्। वक्षोंको दसों अंगुलियोंसे ॐ जनः नेत्राभ्यां वौषट्। नेत्रोंको तर्जनी मध्यमा और अनामिकाओं से ॐ तपः सत्यमस्त्राय फट्। दायें हाथको सिरपरसे घुमाकर इसीकी तर्जनी मध्यमासे चटखायें

उपरके करन्यासकी तरह स्पर्श करें

ॐ तत्सवितुरङ्गुष्ठाभ्यां नमः। वरेण्यं तर्जनीभ्यां नमः। भर्गो देवस्य मध्यमाभ्यां नमः। धीमहि अनामिकाभ्यां नमः। धियो यो नः कनिष्ठिकाभ्यां नमः। प्रचोदयात्करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

उपरके अङ्गन्यासकी तरह करें

ॐ तत्पादयोः। सवितुर्जान्वोः। वरेण्यं कट्याम्। भर्गो नाभौ। देवस्य हृदये। धीमहि कण्ठे। धियो नासिकायाम्।

यः चक्षुषोः । नः ललाटे । प्रचोदयात् शिरसि । उपरके षडङ्गन्यासकी तरह करें ।

ॐ तत्सवितुर्हृदयाय नमः । वरेण्यं शिरसे स्वाहा । भर्गो देवस्य शिखायै वषट् ; धीमहि कवचाय हुम् । धियो यो नः नेत्राभ्यां वौषट् । प्रचोदयादऽस्त्राय फट् । अङ्गन्यासकी तरह करें । ॐ आपः स्तनयोः । ज्योतिर्नेत्रयोः । रसो मुखे । अमृतं ललाटे । ब्रह्मभूर्भुवः स्वरों शिरसि ॥

अब मुद्रायें वस्त्रसे हाथोंको छिपाकर करें । किसीकी दृष्टिमें न करें । (इनके करनेका आकार अन्तमें देखो) तन्त्र शास्त्रोंमें लिखा है कि जो मुद्राओंको न जाने उसका जप निष्फल होताहै

ॐ 'तत्' समाय नमः । 'स' सम्पुटाय नमः 'वि' विततायं नमः । 'तु' विस्तीर्णाय नमः । 'व' द्विमुखाय नमः । 'रे' त्रिमुखाय नमः । 'णि' चतुर्मुखाय नमः । 'यं' पञ्चमुखाय नमः । 'भ' षण्मुखाय नमः । 'गों' अधोमुखाय नमः । 'दे' व्यापकाञ्जलये नमः । 'व' शकटाय नमः । 'स्यं' यमपाशाय नमः ।

'धी' ग्रन्थिकायै नमः । 'म' संमुखोन्मुखाय नमः। 'हि' विलम्बाय नमः । 'धि' मुष्टिकायै नमः। 'यो' मीनाय नमः । 'यो' कूर्माय नमः । 'नः' वराहाय नमः। 'प्र' सिंहाक्रान्ताय नमः। 'चो' महाक्रान्ताय नमः। 'द' मुद्गराय नमः । 'यात्' पल्लवाय नमः ॥ प्राणायाम करें

गायत्री सर्वोत्कृष्ट मन्त्र है इसके यथार्थ ज्ञानसे विशेष फल होता है जिन मनुष्योंके लिये गर्भाधानसे लेके मरणपर्यन्त षोडश संस्कार कहे हैं उनही को गायत्रीका अधिकार है औरोंको नहीं ॥ जो मनुष्य तीन वर्षतक निरालस्य गायत्रीका जप करे । तो वायुकी तरह बिना रुकावटके वह ब्रह्मरूप होकर ब्रह्मको पाता है ॥ मनुः अ० २ श्लो० ८०-८१-८२

गायत्रीके आदि और अन्तमें प्रणव अवश्य लगाना चहिये नहीं तो जप निष्फल होगा । जब मनुष्यको वेदपाठ पढनेकी शक्ति नहो तो वह बनमें जलके समीप केवल गायत्रीको विधि पूर्वक पढे तो भी फल विशेष है। मनुः अ० २ श्लो० १-४

'ओं भूः' 'ओं भुवः' 'ओं स्वः' और गायत्रीके तीनों चरण परमात्माके मिलनेके द्वार हैं। इनको वेद पढनेवाले ब्राह्मण दोनों वक्तकी सन्ध्यामें जपें । तो कुल वेदपाठके फलको प्राप्तकर लेते हैं। मनुः अ०२ श्लो० ८१-७८ जो एक मासतक घरसे बाहर नित्य १००० बार जप करे। तो बढे पापसे छूट जाता है जैसे सांप केंचुलसे छूटता है॥ मनुः अ० २ श्लो० ७९

अब दायें हाथसे जलको उठाकर जलमें छोडते पढें ॥ (मनमें निश्चय करें कि मैं धर्म, अर्थ, काम, और मोक्षके अर्थ

गायत्री मन्त्रका दशांश, एकमाला या दस मालायें जपों)

ॐ अस्य श्रीतत्सवितुरितिमन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषिः । गायत्रं च्छन्दः । सविता देवता । आत्मनो वाङ् मनः कायोपार्जितपापनिवारणार्थे धर्मार्थ काम मोक्षार्थे श्रीमहागायत्री सहस्रजपे (एकमालाजपे, दशांशजपे) विनियोगः ॥

नमस्कार धरके पढ़ें

अथ ध्यानम् । मुक्ता विद्रुमहेमनीलधवल-च्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्न-मुकुटां तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम् । गायत्रीं वरदाभयांकुशकरां शूलं कपालं गुणं शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

प्रभातकी सन्ध्या 'गायत्री' सुर्खवर्ण ऋग्वेद मुखवाली भूलोक स्थित ब्रह्मरूपिणी राजहंस पर आरूढ है। मध्याह्नकी सन्ध्या 'सावित्री' सफेदवर्ण यजुर्वेद मुखवाली अन्तरिक्षस्थित शिवरू-पिणी वृषभारूढ है । सायंकालकी सन्ध्या 'सरस्वती' नीलवर्ण सामवेद मुखवाली स्वर्लोकस्थित विष्णुरूपिणी गरुड सवार है॥

अञ्जलि धरकर तीनबार पढ़ें ॥

आगच्छ वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मवादि-नि । गायत्रि छन्दसां मातर्ब्रह्मयोने न-मोऽस्तुते ३ ॥

फिर प्राणायाम करें ।

गायत्री रहस्यमें लिखा है कि शापसे मुक्त गायत्री चतुर्वर्ग फलको देनेवाली है और शापमुक्त न होनेपर चतुर्वर्गका नाश करती है। इसी प्रकार तन्त्रोंमें भी शापमोचन करनेकी आवश्यकता लिखी है। और यहां पूर्वकालसे ही इसके करनेका शिष्टाचार है। इस कारण इसके कई शापमोचनोंमें से जो एक यहां प्रचलित है उसको लिख रखते हैं ॥

अथ शापोद्धारः

ओं विश्वामित्र ऋ० विष्टारपांक्तिः छ० प्रजापतिर्दे० शापोद्धारे विनियोगः ॥

ओं ब्रह्मणाग्निः संविधानो रक्षोहा बाधतामितः । अमीवायुस्ते गर्भे दुर्नामयोनिमाशये ॥

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

सुभद्रा पावनी सुधा गायत्री विश्वभेषजम् । विशापामेनां कृत्वा तु यथास्तं विपरीतन ॥

ओं एं ऐं आवाय व्ययावायव्ययान्यौर्वयाय वा ओं २

ओं हरोसि पाप्मानं मे विद्धि । इति प्रातः ।

ओं तद्भर्गोसि पाप्मानं मे विद्धि । इति मध्याह्ने ।

ओं संविदसि पाप्मानं मे विद्धि । इति सायम् ।

ओं कारास्त्रेण नित्यं त्वं बिन्दुबीजेन शोभिता । मुनीनामनुरोधेन शापमोक्षो भवेत्त्वयि ॥ अहो देवि महादेवि देवि सिद्धे सरस्वति । अजरे अमरे देवि वासिष्ठशापमोचिता ॥

॥ इति शापमोचनम् ॥

अञ्जलि धरकर विज्ञप्ति करें ।

ॐ दुर्निवारभयध्वान्तध्वंसनैककृतेक्षणाम् । नौमि मोहविनाशाय भीतो ब्रह्माधिदेवताम् ॥ दुर्गतिं हर मे देवि बहुजन्मशतार्जिताम् । प्राप्य कल्पतरुच्छायां कथं संतप्यते जनैः ॥ पश्य मामाशु गायत्रि विभ्रान्तं स्निग्धचक्षुषा । न बालमबलं पुत्रं मुञ्चत्यग्रगमऽम्बिका ॥ एहि मां पाणिपद्मेन देहि तूर्णं वरं शुभम् । महामोहाकुलं पुत्रं देवि मां स्पृश नित्यशः ॥ मातः प्रतीक्षते नार्तो यत्तदाशु प्रसीद मे । धृताक्षसूत्रं सावित्रि निर्विघ्नं पश्य मामिह ॥ भृण्वतो नान्यकृत्यं स्यात्त्वं परहितं कुरु । ब्रह्मविष्णुहराद्यास्त्वामाश्रयन्ति सुरेश्वरि ॥

अब अक्षमालाको जो १०८ दाने समेरु और ब्रह्मग्रन्थि वाली हो, धोकर समेरु पर तिलक, अर्घ, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, और दक्षिणा हरएक वस्तु "ह्रीं सिद्धयै अक्षमालाभगवत्यै नमः" इस मंत्र से निवेदनकरके और "माले माले महामाले सर्वतत्त्वस्वरूपिणि । चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तं तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥"
इस मन्त्रसे प्रार्थनाकरके ताम्बूल मुखमें डालकर प्रातः सन्ध्यामें खडे और सायं और मध्याह्न सन्ध्यामें पद्मासन वा सिद्धासन से बैठकर मन्त्रका जप किया करें ॥

चौकडी लगानेमें दाईं रानपर बायां पैर और बाईं रान पर दायां पैर रखकर भुजाओंको पीठके पीछेसे घुमाकर दायें हाथसे बायें पादके अंगूठेको, और बायें हाथसे दायें पादके अंगूठेको पकडे, और ठोढी हृदयसे लगावे, और नासिकाके अग्रको वा भ्रूमध्यको देखे, यह पद्मासनका प्रकार है । समाधिके उपयोगी है । मालाजपके समय केवल पैर और नेत्रही जमावे ॥

मुख जिह्वा आदिसे मन्त्रका उच्चारण नकरें । केवल मनमें जपें ।

जपकालमें दायें हाथ और मालाको हृदयके साथ धराकरें। और छुपा रखें ॥ छाती गर्दन और सिर न झुकाकर रखें। नाकके अग्र पर वा भ्रूमध्यपर वा सूर्य उदय होनेके स्थान (उफक) पर दृष्टिको जमायें। जिह्वा हूएठ वा कोई अङ्ग न हिलायें दांत न दिखलायें॥

अनामिका और कनिष्टाके सहारेपर मध्यमाको रखकर इसके अगले पर्वपर अंगूठेसे एक मन्त्रजपकर एक २ दानेको हथेलीकी तरफ छोडते जायें। अन्तके दानेपर पहुंचकर अगर दूसरी तीसरी माला करनी हो तो मालाको मोडकर अन्तके दानेसेही फिर आरम्भकरना चाहिये॥ तर्जनीसे मालाको न छूहें। इसको मालासे दूर रखें॥ घरसे नदीतक मालाको पगडी के नीचे रखकर लाया करें॥ यह माला न किसीको देदेनी न दिखानी। अवसर जियादा नहोनेपर दशांश तो अवश्य करना चाहिये॥

दशांशकी विधि अनामिकाकी नीचली दो गांठ, कनिष्टाकी नीचेसे उपरतक तीन, अनामिका और मध्यामकी उपरली दो, तथा तर्जनीके उपरसे नीचेतक तीन गांठ 'न कि रेखायें' यह सब दस 'दशांश'के पत्र हैं॥ मध्यमाके बचे दो पर्वोंको समेरु माने॥

हाथपर जपके समय आपसमें अंगुलियां मिलाकर रखनी और अंगूठेको गांठोंपर फिराते गसीटते लेना न कि उपर उठाकर लेजाना॥

ब्राह्मणगायत्री मन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वस्तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ओं १०८ ॥ मालाको सिरपर रखकर **प्राणायाम** करें।

जप निवेदनमें जलका तर्पण करें:—

मनसस्पति ऋषिः, विराट् छन्दः, वातो देवता, विसर्जने विनियोगः॥ देवा गातुविदो ...

ओं देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देवयज्ञँ स्वाहा वाते धाः ॥ तर्पणके बचे जलसे माथेको छिडकायें।

आठ मुद्रायें करें (पुस्तकके अन्तपर मूर्तियां देखो)

सुरभि-ज्ञान-चक्रं च योनिः कूर्मोऽथ पङ्कजम्
लिंगं-निर्याणकं चैव अष्टौ मुद्राः प्रकीर्तिताः ॥

तर्पण करें:— अनेन श्रीमहागायत्रीसहस्रजपेन (एकमालाजपेन, दशांशजपेन) धर्मार्थकाममोक्षार्थं श्रीमहागायत्री सावित्री सरस्वती प्रीयतां प्रीता भवतु ॥

माथेको छिडकें। अब गायत्री विसर्जनमें नमस्कार करें ॥

महेशवचनोत्पन्ने विष्णोर्हृदयसम्भवे। ब्रह्मणा समनुज्ञाते गच्छ देवि नमोऽस्तु ते॥
उत्तमे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम् ॥

गायत्री जपके फलका चिन्तन प्रार्थनामें पढें ॥

दशभिर्जन्मचरितं शतेन तु पुरा कृतम्। त्रियुगं तु सहस्रेण गायत्री हन्ति किल्विषम् ॥

अर्थात् दशांशसे इस जन्मके पाप छूट जाते हैं। एकमालासे पूर्व जन्मके। और हजार मालासे तीन युगोंके पाप नष्ट जाते हैं ॥

तीनों कालकी सन्ध्या यदि प्रभातको ही करनी हो तो सायंसे आरम्भ करना चाहिये । अर्थात प्रथम सायके मन्त्र फिर प्रातः के फिर मध्याह्नके ॥ व्याहृति वैश्वदेव हवनमें भी इसी प्रकार सायसे आरम्भ करना चाहिये ॥

सन्ध्या छूटनेका प्रायश्चित :-

यदि किसी कारणसे सन्ध्या छूट गई हो तो उसका सुलभ उपाय यह है कि ८०००गायत्रीका जप शुभ दिनमें शुद्ध चित्तसे करें ; और अगर सम्भव हो तो व्याहृति हवनभी करें॥ उस हवनका भी सायंके मन्त्रोंसे ही आरम्भ करें । और मनमें यह निश्चय करें कि फिर कदापि सन्ध्याका त्याग न होगा ॥

प्रायश्चित्तन्दुशेखरः- नित्य कर्ममें जो कदापि ठीक समयपर सन्ध्या न की जाये तो एकमालाका उस दिन जियादा जप करना उसका प्रायश्चित है । धर्म सिन्धु । पूर्वर्द्ध ३ परिच्छेद ॥

प्र .क मन्त्रसे प्रत्येक दिशाकी तरफ नमस्कार करें ॥

पूर्वको नारायणस्य दिग्विदिगादि च ।

ओं नमः प्राच्यै दिशे याश्च देवता एतस्यां प्रति वसन्त्येताभ्यश्च वो नमः ।

पूर्वदक्षिणकोणको ओं नमोऽवान्तरायै दिशे याश्च देवता एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यश्च वो नमः । दक्षिणको ओं नमो दक्षिणायै दि० ।

दक्षिणपश्चिमकोणको ओं नमोऽवान्तरायै दि० ।

पश्चिमको ओं नमः प्रतीच्यै दि० । पश्चिमोत्तरकोणको ओं नमोऽवान्तरायै दि० । उत्तरको ओं नम

उदीच्यै दि० । पूर्वोत्तरकोणको ॐ नमोऽवा-न्तरायै दि० । ऊपरको ॐ नम ऊर्ध्वायै दि० । नीचेको ॐ नमोऽधरायै दिशे० ॥ तर्पण करें:—
ॐ नमो ब्रह्मणे । नमो अस्त्वग्नये । नमः पृथिव्यै । नम ओषधीभ्यः । नमो वाचे । नमो वाचस्पतये । नमो विष्णवे । बृहते कृणोमि ॥ इत्येतासामेव देवतानां सार्ष्टिं सायुज्यं सलोकतां सामीप्यमाप्नोति । य एवं विद्वान् स्वाध्यायमधीते ॥ माथेको छिडकें

तर्पणकी विधि:— देवता ऋषि और पितरोंका तर्पण सोने रूपे उडुम्बर वा गेण्डाके पात्रसे अथवा अञ्जलिसे, दूध, दही, सर्षप, अक्षत, तिल, शहद, घी, और कुशाके विष्ठरके समेत जल से करना चाहिये । परन्तु तर्पणकी धार गायके सींगके बराबर ऊंची हो । अञ्जलि धरके पूर्वकी तरफ मुखकरके देवताओंका आवाहन करें ॥ गृत्समदस्य गायत्री विश्वेदेवाः ।

ॐ विश्वे देवास आगत शृणुता म इमँ हवम् । एदं बर्हिर्निषीदत ॥

हर एक नाम पर एक २ बार अञ्जलिसे या पात्रसे अंगुलियोंके सिरोंपरसे देवताओंको जल देवें :—

ॐब्रह्मा तृप्यताम् । विष्णुस्तृप्यताम् । रु-द्रस्तृप्यताम् । प्रजापतिस्तृप्यताम् ।

देवास्तृप्यन्ताम्। छन्दांसि तृ०। वेदास्तृ०। ऋषयः तृ०। तपोधनाः तृ० आचार्याः तृ०। गन्धर्वाः तृ०। इतराचार्याः तृ०। संवत्सराः सावयवाः तृप्यंताम्। देव्यः तृप्यंताम्। अप्सरसः तृ०। देवानुगाः तृ०। नागाः तृ०। सागराः तृ०। पर्वताः तृ०। सरितः तृ०। मनुष्याः तृ०। यक्षाः तृ०। रक्षांसि तृ०। पिशाचाः तृ०। सुपर्णाः तृ०। भूतानि तृ०। पशवः तृ०। ओषधयः तृ०। वनस्पतयः तृ०। भूतग्रामश्चतुर्विधः तृप्यताम्। असुराः तृप्यन्ताम्। क्रूराः तृ०। सर्पाः तृ०। जम्बुकाः तृ०। तरवः तृ०। खगाः तृ०। विद्याधराः तृ०। वाय्वाधाराः तृ०। जलाधाराः तृ०। निराधाराः तृ०। आकाशगामिनः तृ०। धर्मरताः तृ०। सर्वे ग्रहाः तृप्यन्ताम्। यमः तृप्यताम्। धर्मराजः तृ०। मृत्युः तृ०। अन्तकः तृ०। वैवस्वतः तृ०। कालः तृ०।

सर्वप्राणहरः तृ०। औदुम्बरः तृ०। नीलः तृ०। दध्नः तृ०। परमेष्ठी तृ०। वृकोदरः तृ०। भीमः तृ०। चित्रः तृ०। चित्रगुप्तः तृ०। पाशहस्तः कृतान्तस्तृप्यताम्॥

ईशान कोनकी तरफ मुखकरके गर्दन और दो अंगूठोंमें यज्ञोपवीत रखें और अञ्जलि धरके ऋषियोंका आवाहन करें

कण्ठोपवीती। ओं अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयम्॥ हर एक नामपर दो२ बार अञ्जलिसे वा उपरके पात्रोंसे कनिष्ठाओंके मूलपरसे ऋषियोंको जल देवें:—

ओं सनकः तृप्यताम् २। सनन्दनः तृ० २। सनातनः तृ० २। सनत्कुमारः तृ० २। कपिलः तृ० २। आसुरिः तृ० २। वोढा तृ० २। पंचाशिखः तृ० २। मरीचिः तृ० २। अत्रिः तृ० २। अङ्गिराः तृ० २। पुलस्त्यः तृ० २। पुलहः तृ० २। क्रतुः तृ० २। प्रचेताः तृ० २। भृगुः तृ० २। वसिष्ठः तृप्यताम् २। नारदः तृप्यताम् २॥

दक्षिणकी तरफ मुखकरके गर्दन और बाईं भुजामें यज्ञोपवीत धरें और अञ्जलि धरकर पितरोंका आवाहन करें

ततः प्राचीनावीती । शंखस्य त्रिष्टुप् पितरः ।

ओं उशन्तस्त्वा हवामह्युशन्तः समिधीमहि । उशन्नुशत आ वह पितॄन्हविषे अत्तवे ॥ प्रत्येक नामपर तीन २ बार जलाञ्जलिसे वा पात्रसे दाईं अंगूठे और तर्जनीके मध्यमेंसे जल देवें :—

ओं कव्यवाडनलः स्वधा नमः तृप्यताम ३। सोमः स्व० ३। अर्यमा स्व० ३ । यमः स्व० ३ । अग्निष्वात्ताः स्व० तृप्यंताम ३ । बर्हिशदः स्व० ३। हविष्मन्तः स्व० ३ । सोमपाः स्व० ३ । सुकालिनः स्व० ३ । आज्यपाः स्व० ३। वसवः स्व० ३ । रुद्राः स्व० ३ । आदित्याः स्वधा नमः तृप्य० ३॥

अञ्जलि धरकर अपने मृत पितरोंका आवाहन करते जल देवें

शंखस्य त्रिष्टुप् पितरः ।। ओं उदीरतामवर उत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः । असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥

यमस्य त्रिष्टुबङ्गिरसः ॥

ओं आङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः। तेषां वयँ सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम ॥

शंखस्य त्रिष्टुप् पितरः। आ यन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः। अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥

देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च। नमः स्वधा च स्वाहा च नित्यमेव भवन्त्विह ॥

आजके मास पक्ष, तिथि और वारका नाम उच्चारणकरके मृतपितरोंक नाम पर, सब पुरुषों और माता पितामही प्रपितामहीको तीन २ बाकी स्त्रियोंको एक २ जलाञ्जलि देवें ॥ दाईं अंगूठे और तर्जनीके मध्यसे स्वर्गवासी पिताका नाम और गोत्र लेकर तीन अञ्जलियां देवें:—

अद्य तावत् – पिता – स्वधा नमः तृप्यताम् ३। पढते २ जल देते जायें:—

वामदेवस्योष्णिगापः। ओं ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं मधु पयः कीलालं परिस्रुतम्। स्वधा स्थ तर्पयत मे पितॄन् ॥ प्रजापतेस्त्रिष्टुप् पितरः।

पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः । पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः । प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः । अक्षन् पितरोऽमी मदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः । पितरः शुन्धध्वम् ॥ ओं ये चेह पितरो ये च नेह याँश्च विद्म याँ २॥ उ च न प्रविद्म । त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञँ सुकृतं जुषस्व ॥

पितामहका नाम और गोत्र बोलकर तीन बार देवें :—

पितामहः — स्वधा नमः तृप्यताम् ३ ।

पितरोंका ध्यान करते जल देते जायें :—

(गौतमस्य) गायत्री विश्वेदेवाः ॥

नारायणस्यार्षम् ॥ ओं मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥ १ ॥ मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवँ रजः । मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥ २ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ २॥ अस्तु सूर्यः । माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥ ३ ॥

प्रपितामहका नाम और गोत्र बोलकर तीन बार देवें:—

प्रपितामहः स्वधा नमः तृप्यताम् ३ ॥

श्रद्धासे झुककर और अञ्जलि धरकर नीचेके मन्त्र पढ़ें ।

ॐ नमो वः पितरो मन्यवे । नमो वः पितरः शुष्माय । नमो वः पितरो जीवाय । नमो वः पितरो रसाय । नमो वः पितरो बलाय । नमो वः पितरः क्रूराय । नमो वः पितरः स्वधा वः । पितरो यत्र पितरः । स्वधा यत्र यूयं स्थ सा युष्मासु तथा यूयं यथाभागं मादयध्वं येह पितर ऊर्ग्यत्र वयं स्मः सास्मासु तस्यै वयं ज्योग्जीवन्तो भूयास्म ॥

स्वर्गवासिनी माईका नाम और गोत्र लेकर तीन बार जल देवें

माता — स्वधा नमः तृप्यताम् ३ ॥

इसीतरह आगे पितामही आदि सब पितरोंको जल दे देवें ॥ (परन्तु पितामही और प्रपितामहीको भी तीन२ बार बाकी स्त्रियों को एक २ बारही देवें ॥)

पितामही स्व० प्रपितामही स्व० मातामहः स्व० प्रमातामहः स्व० वृद्धप्रमातामहः स्व० मातामही स्व० प्रमातामही स्व० वृद्धप्रमातामही स्व० जल देते ३ पढ़ें ॥ मातृपक्ष्यास्त

ये केचिद्ये चान्ये पितृपक्षजाः। गुरुश्वशुरबन्धूनां ये कुलेषु समुद्भवाः ॥ ये प्रेतभावमापन्ना ये चान्ये श्राद्धवर्जिताः । जलदानेन ते सर्वे लभन्तां तृप्तिमुत्तमाम् ॥ समस्तमातापितृभ्यो द्वादशदैवतेभ्यः पितृभ्यो हिमपानं स्वधा, क्षीरपानं स्वधा, मधुपानं स्वधा, तिलोदकं स्वधा, उदकतर्पणं स्वधा । हिमं २ रजतम् २ ॥

यज्ञोपवीतको गर्दन और दाईं भुजामें रखकर अंगुलियोंके सिरों परसे जल देवें:– सव्येन । वसन्ताय नमः । ग्रीष्माय नमः । वर्षाभ्यो नमः। शरदे नमः। हेमन्ताय नमः। शिशिराय नमः। षड्तुभ्यो नमः ॥ देवासुरास्तथा यक्षा नागा गन्धर्वकिन्नराः। पिशाचा गुह्यकाः सिद्धाः कूष्माण्डास्तरवः खगाः ॥

यज्ञोपवीतको गर्दन और दो अंगूठोंमें रखकर कानिष्ठाओंके मूल परसे जल देवें :– कण्ठोपवीती। जलेचरा भूनिलया वाय्वाधाराश्च जन्तवः । तृप्तिमेते प्रयान्त्वाशु मद्दत्तेनाम्बुनाखिलाः ॥

बाईं भुजामें यज्ञोपवीत रखकर दाईं अंगूठे और तर्जनीके मध्यसे जल देवें :— अपसव्येन । नरकेषु च सर्वेषु यातनासु च ये स्थिताः । तेषामाप्यायनायैतद्दीयते सलिलं मया ॥ येऽबान्धवा बान्धवा वा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः । ते तृप्तिमखिला यान्तु यश्चास्मत्तोऽभिवाञ्छति ॥ येषां गृहे मया भुक्तं येषां भुंजाम्यहं पुनः । पुत्रदारविहीनाश्च नरके वा वसन्ति ये ॥ तेभ्यः सर्वेभ्यः पितृभ्य इदमस्तु तिलोदकम् ॥

माघकी शुक्ल पक्ष अष्टमीके दिन भीष्म पितामहका तर्पण और श्राद्ध करना महाभारत हेमाद्रि व पद्मपुराणकी आज्ञासे ब्राह्मण आदिकोंका आवश्यक कर्म और पुत्र पौत्र वर्द्धक लिखा है उस का नकरना बर्समें किये पुण्यका नाशकभी लिखा है इस कारण उस तर्पणकी विधि लिखी जाती है :— अपसव्येन करके ओं तत्सद्ब्रह्मेत्यादि पढकर तिल, दर्भ, विष्ठर, और जलसे,

वैयाघ्रपद (द्य) गोत्राय संकृतिप्रवराय च । अपुत्राय ददाम्येतत्सलिलं भीष्मवर्मणे । पितामहः भीष्मभारद्वाजगांगेयः स्वधा नमः तृप्यताम् ३ ॥ भीष्मः शन्त-

नवो वीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः । आ-
भिरद्भिरवाप्नोतु पुत्रपौत्रो चितां क्रियाम्॥

यज्ञोपवीतको गर्दन और दाईं भुजामें रखकर जल देवें :—

सव्येन । नमो देवेभ्यः । यज्ञोपवीतको गर्दन और दो अंगूठोमें रखकर जल देवें:– कण्ठोपवीती । स्वाहा ऋषिभ्यः । यज्ञोपवीतको गर्दन और बाईं भुजामें रखकर जल देवें:– अपसव्येन । स्वधा पितृभ्यः ।

यज्ञोपवीतको दाईं भुजा और गर्दनमें रखकर जल देवें :–

सव्येन । आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं ब्रह्माण्डं सचराचरम् । जगत्तृप्यतु ३ एवमस्तु ॥

सूर्य देवताको गायत्रीमन्त्र और हंसः शुचिषत् – इत्यादि मन्त्र पढकर तिल, दर्भ, समेत जलसे अर्घ्य देकर नमस्कार करें:—

नमो धर्मनिदानाय नमः सुकृतसाक्षिणे ।
नमः प्रत्यक्षदेवाय भास्कराय नमो नमः ॥
ॐ नमो विवस्वते ब्रह्मन्भानवे विष्णुते-
जसे । जगत्पवित्रे शुचये सवित्रे शर्मदा-
यिने ॥

अङ्गोचा बाईं तरफकी शिला वा देहलीपर निचोडें, नदी आदि तीर्थमें कभी न निचोडें, स्नान निष्फल होजाता है ॥ और देव ऋषि पितरोंके तर्पणसे पहलेभी न निचोडें ॥ पितर देवों और ऋषिओं समेत निराश होकरवापस जाते हैं । श्राद्धके दिन श्राद्ध

करके इसको देहलीपर निचोड़ें ॥ निचोडनेका मन्त्र :—

अपसव्येन । अस्मत्कुले तु ये जाता अपुत्रा गोत्रजा मृताः । ते पिबन्तु मया दत्तं वस्त्र-निष्पीडनोदकम् ॥ तीर्थको नमस्कार करें

शान्तिः पुष्टिस्तथा तुष्टिः सन्तु मे त्वत्प्र-सादतः । सर्वपापप्रशान्तिश्च तीर्थराज नमोस्तु ते ॥ गङ्गा और वितस्ताको नमस्कार

अक्षसूत्राम्बुजकरामादर्शकलशान्विताम् मीनपद्मासनासीनां वितस्तां शरणं श्रिये॥ गङ्गैव मुक्तिदा क्षेत्रे गङ्गा किल्विषना-शिनी । त्रैलोक्यां पाहि मे गङ्ग हरिगङ्गे नमोस्तु ते ॥

इति सन्ध्योपासनविधिः समाप्तः ॥

॥ यज्ञोपवीत बनानेका तरीका ॥

१ जीवितपति ब्राह्मणीके वा ब्राह्मणकन्याके हाथसे, उनके न मिलनेमें पतिव्रतास्त्रीके हाथसे, उस केभी न मिलनेमें सच्चरित्रवाली विधवाब्राह्मणीके ही हाथसे, शुद्ध रूईको बिनौलोंसे अलग करके हाथ सेही धुनवाके, फिर कतवाके जो यह सूतकी तार छेद

रहित बने, उसी तारसे ब्राह्मण शुद्ध स्थानमें बैठकर यज्ञोपवीत बनाना आरम्भ करे। आरम्भसे समाप्त तक गायत्री मंत्र मनमें जपना चाहिए ॥

२ खोलकर रखे हुये बायें हाथकी मिली हुई चार अङ्गुलियोंकी जडपर कनिष्ठाकी हथेलीकी तरफकी जडसे आरम्भ करके उसीके पीठकी तरफकी जड तक लपेटकर कुल नौ अंगुल लम्बाईका नाम वामाहै

३ इसी वामापर विवाहित पुरुषके ६ लडी यज्ञोपवीतके वास्ते १९२बार तार लपटें और (अविवाहित ब्रह्मचारी) ३ लडी यज्ञोपवीतके वास्ते ९६ बार तार लपटें जिससे १९२ (व ९६) वामा लम्बी तार बने। अन्तपर पहोंछकर बाकी तारसे काटनेके विनाही गिनी हुई तारको दुहरी बनाके फिर अन्तपर पहोंछ कर उस दुहरी तारको तिहरी बनावें अब तिहरी तार बननेके बाद बाकी बची तारको काट छोडे।

४ अब उस तिहरी तारको शुद्ध पानीमें थोडे समय भिगो रखकर फिर उपरको बटकर त्रिवलित करें। ताकि यह १९२ वामा लम्बी तिहरी तार ६४ वामा लम्बी और ९गुणी बने (और ९६ वामा लम्बी तिहरी तार ३२ वामा लम्बी और ९ गुणी तार बने) फिर इसे नीचेको बटकर ६४ वामावाली तार ६लडी और [३२ वामावाली लम्बी तार ३ लडी वाले] यज्ञोपवीतके वास्ते तैयार हुई ॥

बनाना एकवार परोहितसे सीख रखना चाहिए ॥

७
८
अगम्यागमन निवा०
लिं चतुर्मुखाय नमः
ब्रह्महत्या निवार०
यं पंचमुखाय नमः
मं षण्मुखाय नमः
स्त्रीहत्या निवार०
मौं अधोमुखाय नमः
गोहत्या निवार०
गुरुतल्पगमनदोषनि०
व एकमुखाय नमः

१९
परम पद प्राप्त्यर्थं
यो कूर्माय नमः
२०
पद प्राप्त्यर्थं
य नमः
२१
पद प्राप्त्यर्थं
२२
पद प्राप्त्यर्थं
यो महा
२३
जाग्रत पद प्राप्त्यर्थं
२४
पद प्राप्त्यर्थं

सुरभिः
ज्ञानम्
वज्रम्
योनिः
कूर्मः
पंकजम्

लिंगम्
देव तीर्थ

51

चतुर्विंशति मुद्रा हि गायत्र्याः सुप्रतिष्ठिताः॥ वृथा स्नानं वृथा संध्या वृथा होमो वृथा जपः यो ति मुद्रां न जानाति सर्वं तन्निष्फलं भवेत्॥

मोहनात्सर्वदेवानां द्रावनात्पातकैः तस्मान्मुद्रेयमाख्याता सर्वकर्मार्थसाधिनी॥

मिलनेका पता :—

पंडित ... एन्ड सन्स

... मालिक

'... प्रेस

... कश्मीर